रवीन्द्र-साहित्यकी
समस्त रचनाएँ
मूल बंगलासे
अनूदित हैं

प्रकाशक
धन्यकुमार जैन
पी-१५, कलाकार स्ट्रीट
कलकत्ता - ७

मूल्य
सवा दो रुपया

मुद्रक, सुराना प्रिण्टिंग वर्क्स
४०२, अपर चितपुर रोड, क

तीन साथी

•

अनुवादक

धन्यकुमार जैन

•

हिन्दी-ग्रन्थागार
पी-१५७ कलाकार स्ट्रीट
कलकत्ता-७

भारतकी राष्ट्रभाषा

हिन्दीमें

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरका
सम्पूर्ण साहित्य एकसाथ एक जगह
मिल सके इस उद्देश्यसे यह
ग्रन्थमाला प्रकाशित की जा रही है

आशा है

सुरुचि-सम्पन्न पाठक-पाठिकाएँ और
पुस्तकालय इसे अवश्य अपनायेंगे

और

जितना अधिक और जितनी जल्दी

अपनायेंगे

उतना ही इसका अनुवाद और
प्रकाशन - कार्य सुन्दरता और
शीघ्रतासे आगे बढ़ता जायगा

तीन साथी

रविवार

मेरी इस कहानीका प्रधान नायक है प्राचीन ब्राह्मण-पंडित-वंशका एक लड़का। धन-सम्पत्तिके मामलेमें बाप हैं अपने वकालती-व्यवसायमें गुठली तक पके-हुए, और धर्म-कर्ममें हैं शाक्त आचारके तीव्र जारक-रसमें जारित। अब अदालतमें प्रैक्टिस नहीं करनी पड़ती। एक तरफ पूजा-पाठ और दूसरी तरफ घर-बैठे कानूनी परामर्श देना, इन दोनोंको आस-पास रखकर वे इहलोक और परलोकका जोड़ मिलाकर बड़ी सावधानीसे चलते हैं। किसी भी ओर जरा भी पैर फिसलनेका काम नहीं।

ऐसे ठोस आचार-बद्ध सनातनी घरकी दरार फोड़कर सहसा यदि कांटोंवाला नास्तिक-पौधा निकल आये, तो उसका भीत-दीवार-तोड़ मन जबरदस्त धक्के मारता रहता है ईंट-काठकी प्राचीन चुनाईपर। इस आचार-निष्ठ वैदिक ब्राह्मण-वंशमें दुर्दम्य काला पहाड़का अभ्युदय हुआ हमारे नायकके रूपमें।

उसका असल नाम है अभयाचरण। इस नाममें कुल-धर्मकी जो छाप थी उसे उसने घिसकर साफ कर दिया है। नाम बदलकर कर दिया अभीककुमार। इसके सिवा वह जानता है कि प्रचलित नमूनेका आदमी वह नहीं है। उसका नाम भीड़के नामोंके साथ हाट-बाजारकी घिचपिचमें पसीने-पसीने हो जाय, यह बात उसकी रुचिमें खटकनी है।

अभीकका चेहरा आश्चर्य-रूपसे विलायती ढांचेका है। गठा-हुआ लम्बा गोरा शरीर है, आंखें कंजी, नाक तीक्ष्ण, और ठोडी ऐसी कि मानो किसी प्रतिपक्षके विरुद्ध प्रतिवाद कर रही हो। उसका मुष्टि-योग था अमोघ, सहपाठियोंमेंसे जो कदाचित् उसका पाणि-पीड़न सह चुके थे वे उसे नौ-हाथ दूरसे वर्जनीय समझते थे।

लड़केकी नास्तिकतासे वाप अम्विकाचरण विशेष उद्विग्न नहीं थे। उनके लिए जवरदस्त एक नजीर थे प्रसन्नचन्द्र न्यायरत्न, खुद उनके ताऊ। वृद्ध न्यायरत्न तर्कशास्त्रके गोलन्दाज हैं, चतुष्पाठीमें बैठे वे अनुस्वार-विसर्ग-वाले गोले दागा करते हैं ईश्वरके अस्तित्ववादपर। हिन्दू-समाज हँसके कहता, 'गोले हजम!' कोई दाग ही नहीं पड़ता समाजकी पक्की प्राचीरपर। आचार-धर्मके पिंजड़ेको घरके दालानमें लटकाकर धर्म-विश्वासकी चिड़ियाको शून्य-आकाशमें उडा देनेसे साम्प्रदायिक अशान्ति नहीं होती। किन्तु अमीक वात-वातमें लोकाचारको टूटे सूपमें बिठाकर चालान करता रहता था घूरेके ढेरमें। घरके चारों तरफ कुक्कुट-दम्पतियोंका अप्रतिहत संचरण सर्वदा ही मुखरध्वनिसे प्रमाणित करता रहता था उनपर घरके वड़े-वावूका आभ्यन्तरिक आकर्षण। इस तरहके म्लेच्छाचारकी शिकायतें क्षण-क्षणमें पहुंचती रहतीं वापके कानों तक, पर वे उन्हें सुनी अनसुनी कर देते। यहाँ तक कि वन्धुभावसे जो व्यक्ति उन्हें ऐसी खवर देने आता, गर्जनके साथ शीघ्र ही उसे ड्योढीकी तरफ निकलनेका मार्ग वता दिया जाता। अपराध अत्यन्त प्रत्यक्ष न हो तो समाज अपनी गरजसे उससे बचकर निकल जाता है। किन्तु अन्तमें अमीक एक वार इतनी ज्यादती कर वैठा कि उसका अपराध अस्वीकार करना असम्भव हो गया। भद्रकाली इनलोगोंकी गृहदेवी हैं, उनकी ख्याति थी 'जाग्रत देवी'के रूपमें। अमीकका सतीर्थ नेत्रारा भजू वड़ा डरता था उस देवीकी अप्रसन्नतासे। इससे असहिष्णु होकर उसकी भक्तिको अश्रद्धेय प्रमाणित करनेके लिए अमीकने देवीके वेदी-गृहमें ऐसा-कुछ अनाचार कर डाला कि वापको आग-बवूला होकर कहना पड़ा, "निकल जा मेरे घरसे, मैं तेरा मुँह नहीं देखना चाहता।" इतनी प्रवल क्षिप्रवेगकी कठोरता नियमनिष्ठ ब्राह्मण-पंडित-वंशके चरित्रमें ही सम्भव है।

लड़केने मासे जाकर कहा, "मा, देवीको मैं तो बहुत दिनोंसे छोड़ चुका हूं, ऐसी दशामें देवीका मुझे छोडना वाहुल्य मात्र है। पर, मैं जानता हूं खिडकीके रास्ते हाथ वढ़ानेसे तुम्हारा प्रसाद मिलेगा ही। वहाँ किसी देवीकी देवताई नहीं चलनेकी, चाहे वे कितनी ही वडी 'जाग्रत देवी' क्यों न हों।

माने आँखें पोंछते हुए आँचलसे खोलकर उसे एक नोट देना चाहा। उसने कहा, "इस नोटको जब मुझे बहुत ज्यादा जरूरत नहीं रहेगी तभी इसे लूंगा मैं तुम्हारे हाथसे। अलक्ष्मीके साथ कारबार करनेमें जोर लगता है, बैङ्क-नोट हाथमें लेकर ताल नहीं ठोंका जा सकता।"

अमीकके सम्बन्धमें और भी दो-एक बात कहनी पड़ेगी। जीवनमें उसके दो उलटी-जातके शौक थे, एक कल-कारखानेका जोड़ना-तोड़ना और दूसरा तसवीर खींचना। उसके बापके थीं तीन-तीन मोटरगाड़ियाँ, उनकी मुफस्सिल यात्राकी वाहिकाएं। यंत्र-विद्यामें उसका श्रीगणेश उन्हींको लेकर हुआ था। इसके सिवा बापके एक मुवक्किलके था मोटरका कारखाना, उसने वहाँ शौकसे बेगार की है बहुत दिनों तक।

अमीक चित्रकला सीखने गया था सरकारी आर्ट-स्कूलमें। कुछ ही दिनोंमें उसे दृढ विश्वास हो गया कि और अधिक दिन सीखनेसे उसके हाथ हो जायेंगे मशीनके बने और मगज हो जायगा साँचेमें ढला। वह आर्टिस्ट है इस बातका प्रचार करने लगा अपने बुलन्द गलेसे। उसने प्रदर्शनी खोली, और सामयिक पत्रोंके विज्ञापनमें उसका परिचय निकला "भारतका सर्वश्रेष्ठ कलाकार अमीककुमार, बगाली टीशियन!" वह जितना ही कहने लगा कि 'मैं आर्टिस्ट हूं', उतनी ही उसकी प्रतिध्वनि गूंजने लगी एक गुटके मनकी पोली गुफामें, और वे अभिभूत हो गये। शिष्य और उससे भी अधिक संख्यामें शिष्याएँ जमने लगीं उसकी परिमण्डलीमें। उनलोगोंने विरोधी दलको आख्या दी 'फिलिस्टाइन'। कहने लगे, 'बुर्जुआ हैं।'

अन्तमें दुर्दिनोंके समय अमीकने आविष्कार किया कि उसका धन पिताके मंजूषा-केन्द्रमेंसे निकलकर आर्टिस्टके नामपर जो रजतच्छटा विच्छुरित किया करता था, उसीकी दीप्तिमें थी उसकी ख्यातिकी अधिकांश उज्ज्वलता। साथ-साथ उसने और भी एक तत्त्व आविष्कार किया था कि अर्थ-भाग्यकी प्रवचनाको लेकर आधुनिक लडकियोंकी निष्ठामें कोई खास फर्क नहीं आया। उपासिकाओंने अन्त तक आँखें फाड-फाडकर उच्च-मधुर कण्ठसे उसे कहा है 'आर्टिस्ट'। सिर्फ अपने बीच आपसमें सन्देह किया है कि स्वयं उनमेंसे

दो-एकको छोड़कर बाकी सभी 'आर्टका कुछ समझती-बूझती नहीं, पाखण्ड करती हैं, – जी जल जाता है।'

अभीकके जीवनमें इसके बादका इतिहास लम्बा और अस्पष्ट है। मैली टोपी और तेल-स्याही-लगी नीले रंगकी कमीज-पतलून पहनकर बर्न-कम्पनीके कारखानेमें पहले मिस्तरीगीरी और बादमें हेड-मिस्तरीका काम तक उसने चला दिया है। मुसलमान खलासियोंमें शामिल होकर उसने चार पैसेके परांठे और उससे भी कम दामका शास्त्र-निषिद्ध पशु-मांस खाकर दिन बिताये हैं बहुत सस्तेमें। लोगोंने कहा है, 'वह मुसलमान हो गया है।' उसने कहा है, 'मुसलमान क्या नास्तिकसे भी बड़े हैं?' हाथमें जब कुछ रुपये इकट्ठे हुए तब अज्ञातवाससे निकलकर फिर वह पूर्ण-परिस्फुट कलाकारके रूपमें बोहेमियनी करने लगा। शिष्य जुट गये और शिष्याएँ भी। चश्मा-धारी तरुणियाँ उसके स्टुडिओमें आधुनिक बेआबरू-रीतिसे जिन नग्न-मनस्तत्त्वोंकी आलोचना करने लगीं, उसकी कालिमापर जमने लगा सिगरेटका घना धुआँ। परस्पर एक दूसरेके प्रति कटाक्ष और उंगलीका इशारा कर-करके कहने लगे सब, 'पॉजिटिव्ली वलगर।'

विभा थी इस गुटके बिलकुल बाहर। कालेजके प्रथम सोपानके पास ही अभीकके साथ हो गया उसका परिचय शुरू। अभीककी उमर तब थी अठारह सालकी, चेहरेपर नवयौवनका तेज चमचमा रहा था, और उसका नेतृत्व बड़ी उमरके लड़कोंने भी स्वीकार कर लिया था।

ब्राह्म-समाजमें लालन-पालन होनेसे विभामें पुरुषोंके साथ मिलने-जुलनेका संकोच कतई नहीं था। किन्तु कालेजमें विघ्न उपस्थित हुआ। उसके प्रति किसी-किसी लड़केकी अशिष्टता प्रकट होने लगी हास्य-कटाक्ष-इङ्गित-आभासके माध्यममें। और, एक दिन तो एक शहरी लड़केकी अभद्रताने ज्यादतीका रूप ले लिया। इसपर अभीककी नजर पड़ते ही वह उस लड़केको पकड़कर घसीट लाया विभाके पास, और बोला, "माफी माँगो।" माफी उसे माँगनी ही पड़ी तुतलाते-हुए नतमस्तक होकर। उसके बादसे अभीकने दायित्व लिया विभाके संरक्षणका। इस बातको लेकर उसे अनेक वक्रोक्तियोंका शिकार बनना पड़ा,

किन्तु उसकी चौड़ी छातीसे टकराकर वाक्यबाण सब अलग जा गिरे. उसने किसीकी कुछ परवाह ही नहीं की। विभाने लोगोंकी कानाफूसीसे अत्यन्त सकोच अनुभव किया; किन्तु साथ ही उसके मनमें एक तरहके रोमाञ्चकर आनन्दकी अनुभूति भी हुई।

विभाके चेहरेपर रूपकी अपेक्षा लावण्य कहीं बड़ा है। कैसे वह मनको आकर्षित करता है, व्याख्या करके बताया नहीं जा सकता। अमीकने उससे एक दिन कहा था, "अनाहूतके भोजमें 'मिष्टान्नमितरे जनाः'। किन्तु तुम्हारा सौन्दर्य इतर-जनका मिष्टान्न नहीं। वह तो केवल कलाकारका ही है, लिओनार्डो दा ह्विञ्चीके चित्रके साथ ही उसका मेल है, इनस्क्रूटेब्ल, अचिन्त्य!"

एक बार कालेजकी परीक्षामें विभा अमीकको लांघ गई थी, इसपर वह बहुत रोई और अपनेपर उसे गुस्सा भी खूब आया। मानो यह उसका अपना ही असम्मान हो। अमीकसे कहती, 'तुम रात-दिन सिर्फ चित्रोंके पीछे पड़कर परीक्षामें पिछड़ जाते हो, मुझे बड़ी शरम आती है।'

बात दैवसे पासके बरडेमें खड़ी विभाकी एक सखीके कानमें पड़ते ही उसने आँखें मटकाकर कहा था, "क्या बात है! तुम्हारे ही गरबसे हूं मैं गरबिनी, रूपसी भी हूं तुम्हारे ही रूपसे!'

अमीकने कहा, "कठस्थ-विद्याके दिग्गज लोग जानते ही नहीं कि मैं किस मार्क-शून्य परीक्षामें पास करता चला जा रहा हूं! मुझे चित्र बनाते देखकर तुम्हारी आंखोंमें आंसू उतर आते हैं, और तुम्हारी सूखी पण्डिताई देखकर मेरी आंखोंका तो पानी ही सूख जाता है। तुम हर्गिज नहीं समझोगी, क्योंकि तुमलोग नामी दलके पैरों तले पड़ी रहती हो आंख मींचकर, और हमलोग रहते हैं बदनाम दलके शिरोमणि बनकर।"

इस चित्राङ्कनको लेकर दोनोंमें एक तरहका तीव्र द्वन्द्व-सा था। विभा अमीकके चित्रोंको समझ ही नहीं सकती थी, यह बात सच है। अन्य लड़कियाँ जब उसके चित्रोंके विषयमें शोर मचातीं और गलेमें माला पहनातीं, तो विभा उसे अशिक्षितोंकी मूर्खताका पाखण्ड समझकर लज्जित होती। किन्तु तीव्र क्षोभसे छटपटाता रहता अमीकका मन विभाकी अभ्यर्थना न पाकर। देशवासियोंने

उसके चित्रोंको महज एक पागलपन समझा, और विभाने भी मन-ही-मन उन्हींका साथ दिया,—यह उसके लिए असह्य है। उसके मनमें बार-बार यही कल्पना जागा करती है कि एक दिन जब वह युरोप जायगा और वहाँ उसकी जयध्वनि गूंज उठेगी तब विभा भी गूथने बैठेगी जयमाला !

रविवारका सवेरा है। ब्रह्म-मन्दिरकी उपासनासे लौटकर विभाने देखा कि अमीक बैठा है उसके कमरेमें। पुस्तकोंकी पार्सलका पैकिंग-पेपर पड़ा था रद्दीकी टोकनीमें। उसे उठाकर कलमसे लकीरें खींचकर चित्र बना रहा है।

विभाने पूछा, "अचानक यहाँ कैसे ?"

अभीकने कहा. "सगत कारण बता सकता हूं, किन्तु वह होगा गौण और मुख्य कारणको स्पष्ट बताऊँ तो वह सगत न होगा। और चाहे जो भी समझो, पर ऐसा सन्देह न करना कि चोरी करने आया हूं।"

विभा अपनी टेबिलकी कुर्सीपर बैठ गई, बोली "जरूरत हो तो चोरी भी कर सकते हो, मैं पुलिस नहीं बुलाऊँगी।"

अभीकने कहा, "आवश्यकताके बाये-हुए मुंहके सामने तो नित्य ही रहता हूं। पराया धन हरण करना अनेक क्षेत्रोंमें पुण्य-कर्म है, किन्तु मुझसे इसलिए नहीं बनता कि कहीं अपवाद धोखा न दे पवित्र नास्तिक-मतको ! धार्मिकोंकी अपेक्षा हमलोगोंको बहुत ज्यादा सावधानीसे चलना पड़ता है, खासकर अपने नेति-देवताकी इज्जत बचानेके लिए।"

"बहुत देरसे बैठे हो तुम ?"

"हाँ, बैठा तो बहुत देरसे ही हूं। बैठा-बैठा मनोविज्ञानकी एक दुःसाध्य समस्याको मन-ही-मन हिला-डुला रहा हूं कि 'तुमने काफी शिक्षा प्राप्त की है और बाहरसे देखनेसे मालूम होता है कि बुद्धि भी कुछ है, फिर भी भगवानपर तुम विश्वास कैसे करती हो !' अभी तक कुछ समाधान नहीं कर पाया। शायद बार-बार तुम्हारे घर आकर इस रिसर्चके कामको मुझे पूरा कर लेना पड़ेगा।

"फिर तुम मेरे धर्मके पीछे पड़े !"

"महज इसलिए कि तुम्हारा धर्म मेरे पीछे पड़ा-हुआ है। हम दोनोंके बीच उसने विच्छेदकी दीवार खड़ी कर दी है। मेरे लिए वह मर्मभेदक है। मैं उसे क्षमा नहीं कर सकता। तुम मुझसे व्याह नहीं कर सकतीं, महज इसलिए कि तुम जिसपर विश्वास करती हो, मैं उसपर नहीं करता, क्योंकि मेरे बुद्धि है। किन्तु तुमसे व्याह करनेमें मुझे तो कोई आपत्ति नहीं, भले ही तुम नासमझकी तरह सत्य-असत्य चाहे जिसपर विश्वास क्यों न करती रहो। नास्तिककी जात तो तुम मार नहीं सकतीं। मेरे धर्मकी श्रेष्ठता यहींपर है। सब देवताओंसे तुम मेरे लिए अधिक प्रत्यक्ष सत्य हो—इस बातको भुला देनेके लिए एक भी देवता नहीं है मेरे सामने।"

विभा चुप बैठी रही। थोड़ी देर बाद अमीक कह उठा, "तुम्हारे भगवान क्या मेरे पिता जैसे ही हैं! मुझे त्याज्यपुत्र कर दिया है?"

"ओह, क्या बक रहे हो!"

अमीक जानना चाहता है कि व्याह न करनेका मजबूत कारण कहां है। बात विभाके मुँहसे कहला लेना चाहता है, और विभा चुप रह जाती है।

जीवनके आरम्भसे ही विभा अपने पिताकी ही लड़की है सम्पूर्ण-रूपसे। इतना प्यार और इतनी भक्ति वह और-किसीको भी नहीं दे सकी। उनके पिता सतीश भी अपनी इस लड़कीपर असीम स्नेह उँड़ेलते रहे हैं। इतना कि माके मनमें भी ईर्ष्या होने लगी थी। विभाने बनके पाली थीं, उसकी मा बराबर खिटखिट किया करती थीं कि 'ये बहुत ज्यादा किचियाती रहती हैं!' विभाने आसमानी रंगकी साड़ी और जाकेट बनवाई थी, माने कहा था, 'यह रंग विभाके बिलकुल ही अच्छा नहीं लगता।' विभा अपनी ममेरी बहनको बहुत चाहती थी। विभाने उसके व्याहमें जानेकी जिद की तो मा कह बैठीं, 'वहां मैलेरिया है।'

माकी तरफसे पद-पदपर बाधा पाते-पाते बापपर उसकी निर्भरता और भी गंभीर और मज्जागत हो गई थी।

माकी मृत्यु हुई पहले। उसके बाद बापकी सेवा करना ही विभाके जीवनका एकमात्र व्रत रहा बहुत दिनों तक। अपने स्नेहशील पिताकी सम्पूर्ण

इच्छाओंको उसने अपनी इच्छा बना लिया था। सतीश अपनी सारी सम्पत्ति दे गये हैं लड़कीको। किन्तु ट्रस्टीके हाथमें। उसके लिए नियमित मासिक खर्चा बँधा-हुआ है। सब रुपये थे उपयुक्त पात्रके लिए, विभाके विवाहकी प्रतीक्षामें। पिताके आदर्शके अनुकूल उपयुक्त पात्र कौन है सो विभा जानती थी। कमसे कम अनुपयुक्त कौन है, इस विषयमें उसे कोई सन्देह ही नहीं था। एक दिन अभीकने इस विषयमें बात छेडी थी, कहा था, "जिन्हें तुम कष्ट देना नहीं चाहती, वे तो हैं नहीं, और कष्ट जिसपर निष्ठुरतासे प्रहार कर रहा है, वह आदमी है ज्योंका त्यों जिन्दा! हवामें छुरी चलानेमें तुम्हारा हृदय व्यथित होता है, और इस रक्त-मांसकी छातीमें भोंकनेमें तुम्हें जरा भी दया-दर्द नहीं!" सुनकर विभा रोती-हुई चली गई। अभीक समझ गया कि भगवानको लेकर तर्क चल सकता है, किन्तु पिताके विषयमें कदापि नहीं।

सवेरेके करीब दस बजे होंगे। विभाकी भतीजी सुस्मिने आकर कहा, "बुआजी, बहुत दिन चढ़ गया है।" विभाने उसके हाथमें चाभीका गुच्छा थमाते-हुए कहा, "जा, तू कोठार खोलकर निकाल सामान, मैं अभी आई।"

बेकारोंके कामकी बँधी-हुई सीमा न होनेसे ही उनका काम बढ़ जाता है। विभाकी गृहस्थी भी वैसी ही है। घरका दायित्व आत्मीयोंकी तरफसे हलका होनेसे ही अनात्मीयोंकी तरफ हो गया है बहु-विस्तृत। इस निजकी गढ़ी गृहस्थीका काम अपने हाथसे करनेका उसे अभ्यास हो गया है, नौकर-चाकर कहीं किसीकी अवज्ञा न कर बैठें इसलिए।

अभीकने कहा, "अन्याय करोगी तुम इसी वक्त जाकर, सिर्फ मेरे प्रति ही नहीं, सुस्मिके प्रति भी। उसे स्वाधीन कर्तृत्वका समय क्यों नहीं देतीं? 'डोमिनियन स्टेटस्' कमसे कम आज-भरके लिए। इसके अलावा, मैं तुम्हें लेकर एक परीक्षा करना चाहता हूं, तुमसे मैंने कभी कोई कामकी बात नहीं कही। आज कहके देखना चाहता हूं। नया अनुभव होगा।"

विभाने कहा, "सो ही होने दो, बाकी क्यों रहे!"

जेवमेंसे अभीकने चनड़ेका एक केस निकालकर खोलके दिखाया। कलाईकी घडी थी एक। घड़ी प्लाटिनमकी थी और मणिवन्ध था सोनेका. हीरेके टुकड़े जडे थे उसमें। वोला, "तुम्हें वेचना चाहता हूं इसे।"

"दंग कर दिया तुमने! वेचोगे?"

"हां, वेचूंगा। आश्चर्य क्यों हुआ तुम्हें?"

विभा क्षण-भर स्तब्ध रहकर वोली, "यह घडी तो मनीपाने दी थी, तुम्हारे जन्म-दिनमें। ऐसा लगता है मानो उसके हृदयकी व्यथा अब भी इसमें धुक-धुक कर रही है। जानते हो उसने कितना दुःख पाया था, कितनी निन्दा सही थी, और कितना दुःसाध्य अपव्यय किया था अपने उपहारको तुम्हारे योग्य वनानेके लिए?"

अभीकने कहा, "यह घड़ी तो उसीने दी थी, किन्तु यह उसने अन्त तक नहीं जानने दिया कि किसने दी है। मगर मैं तो मूर्ति-पूजक नहीं, जो छातीकी जेवमें इस चीजकी वेदी वनाकर मन-मन्दिरमें दिन-रात शंख-घण्टा वजाता रहूं!"

"मुझे आश्चर्यमें डाल दिया तुमने। कुछ ही महीने तो हुए हैं अभी, वेचारी मोतीझरामें—"

"अब वह तो सुख-दुःखके अतीत है।"

"अन्तिम क्षण तक वह अपने इसी विश्वासको लेकर मरी थी कि तुम उसे प्यार करते हो।"

"गलत विश्वास नहीं किया उसने।"

"तो?"

"तो और क्या! वह नहीं है, किन्तु उसके प्रेमका दान आज भी यदि मुझे फल दे, तो इससे वढकर और क्या हो सकता है?"

विभाके चेहरेपर एक अत्यन्त पीडाका लक्षण दिखाई दिया। कुछ देर चुप रहकर उसने कहा, "इतना वडा कलकत्ता पडा था, फिर खासकर मेरे ही पास क्यों आये वेचनेको?"

"क्योंकि मुझे मालूम है कि तुम मोल-तोल नहीं करोगी।"

"इसके मानी हैं, कलकत्तेके बाजारमें मैं ही सिर्फ ठगानेके लिए तैयार बैठी हूं ?"

"इसके मानी हैं, प्रेम अपनी खुशीसे ठगाता है।"

ऐसे आदमीपर गुस्सा आना बड़ा कठिन है। जबरदस्ती छाती फुलाकर लड़कपन करना है यह। इस बातको जानता ही नहीं वह कि किसी बातमें लज्जाका कारण भी है कोई। यही उसका अकृत्रिम अविवेक है, यह जो उचित-अनुचितकी मेड़ोंको अनायास ही छलांग-छलांगकर चलना है उसका, इसीसे स्त्रियोंका स्नेह उसे इतना ज्यादा खींचता रहता है। डाटने-फटकारनेका कोई मौका ही नहीं मिलता इसमें। जो लोग अपने कर्तव्य-बोधका काफी खयाल रखकर चलते हैं, स्त्रियां उनके पैरोंकी धूल माथेसे लगाती हैं। और जिन दुर्दान्त-अशान्तोंके कोई बला ही नहीं न्याय-अन्यायकी, स्त्रियां उनके बाहु-बन्धनमें बंधती हैं।

अपनी टेबिलके ब्लॉटिंग-कागजपर कुछ देर तक नीली पेन्सिलसे दाग काट-कूटकर अन्तमें विभाने कहा, "अच्छा, मेरे पास अगर रुपये हुए तो मैं यों ही दे दूंगी तुम्हे। पर तुम्हारी यह घड़ी मैं हर्गिज नहीं खरीदूंगी।"

उत्तेजित कंठसे अमीकने कहा, "भीख ? तुम्हारे समान धनी अगर होता मैं, तो तुम्हारा दान ले लेता मैं उपहार-स्वरूप ; और देता प्रत्युपहार समान मूल्यका। अच्छा, पुरुषका कर्तव्य मैं ही करता हूं पूरा। यह लो घड़ी, एक पैसा भी नहीं लूंगा तुमसे।"

विभाने कहा, "स्त्रियोंका तो लेनेका ही सम्बन्ध है। इसमें कोई लज्जा नहीं। पर इसके मानी, यह घड़ी नहीं। अच्छा, सुनूं तो सही, क्यों तुम इसे बेच रहे हो ?"

"तो सुनो, तुम जानती हो, मेरी एक अत्यन्त बेहया फोर्ड-गाड़ी है। उसके चाल-चलनकी ढिलाई असह्य हो उठी है। सिर्फ मैं ही हूं जो उसकी दशम दशाको रोके हुए हूं। आठ सौ रुपये देनेसे ही उसके बदलेमें उसके बाप-दादोंकी उमरकी एक पुरानी 'क्राइस्लर' मिलनेकी आशा है। उसे नई बना सकूंगा मैं अपने हाथोंके बदौलत।"

"क्या होगा क्राइस्लर-गाडीका ?"

"व्याह करने नहीं जाऊंगा।"

"ऐसा शिष्ट कार्य तुम करोगे, यह सम्भव नहीं।"

"ताड़ा खूब तुमने! तो, पहले तुम्हींसे पूछता हूं, शीलाको देखा है, कुलदाचरण मित्रकी लडकी ?"

"देखा है तुम्हारे ही साथ जब-तब और जहां-तहां।"

"हां, मेरे बगल ही में उसने जगह कर ली है छाती फुलाकर, औरोंकी गति रोककर। वह ठहरी प्रगतिशीला! शिष्ट-समाज दांतों-तले उगली दबायेगा,—इसीमें उसे आनन्द है।"

"इतना ही क्यों, लडकी-समाजकी छातीमें शूल विध जायगा—इसमें भी तो कम आनन्द नहीं।"

"मुझे भी याद थी यह बात, पर तुम्हारे मुँहसे सुननेमें अच्छी लगी। अच्छा, जी खोलके बताना, उस लडकीका सौन्दर्य क्या अन्याय-प्रकारका नहीं है, जिसे कहा जा सकता है 'विधाताकी ज्यादती' ?"

"सिर्फ सुन्दरी लडकियोंके विषयमें ही विधाताको मानते होगे ?"

"निन्दा करनेकी जरूरत आ पडती है तो, जैसे भी हो, एक प्रतिपक्षको खडा करना ही पडता है। दुःखके दिनोंमें जब रटनेकी तागीद आई तब कवि रामप्रसादने सामने माको खडा करके गाया था, 'तुझे मा कहके अब न पुकारूंगा मैं।' अब तक पुकारते रहनेसे जो फल हुआ था, बिना पुकारे भी फल उससे ज्यादा नहीं हुआ,—लाभमें इतना जरूर हुआ कि भक्तने निन्दा करनेकी हवस मिटा ली। मैंने भी निन्दा करते वक्त विधाताका नाम ले लिया है।"

"निन्दा किस बातकी ?"

"बताता हूं। एक दिन फुटबॉलके मैदानसे शीलाको मैं अपनी गाड़ीमें बिठाकर ले जा रहा था खडबड़-खडबड़ शब्द करता-हुआ, पीछेके पदातिकोंके नासारन्ध्रमें धुआं छोडता-हुआ। इतनेमें सामनेसे श्रीमती पकडासी आती दिखाई दीं,—तुम तो उन्हें जानती हो, 'लम्बे गजकी अत्युक्ति' भी उन्हें

'काम-चलाऊ' कहा जाय तो हुचकी आने लगती है, वे चली आ रही थीं अपनी नई गाडी 'फायट'में बैठीं। हाथ उठाकर हमारी गाड़ी रोकके कुछ देर तक 'हां जी, हूं जी' करती रहीं, और क्षण-क्षणमें कनखियोंसे देखती रहीं मेरी जराजीर्ण गाडीकी तरफ। सचमुच तुम्हारे भगवान अगर साम्यवादी होते, तो महिलाओंके चेहरोंमें इतना ज्यादा ऊँचा-नीचा तारतम्य घटाकर राह-चलते लोगोंके मनमें इस तरह आग न लगाते रहते।"

"इसीसे शायद तुम—"

"हां, इसीलिए मैंने तय किया है कि जितनी जल्दी हो सके, शीलाको क्राइस्लर-गाड़ीमें बिठाकर पकडासी-गृहणीकी नाकके सामनेसे सिंगा बजाते-हुए निकल जाना है। अच्छा, एक बात पूछता हूं, सच बताना, तुम्हारे मनमें क्या जरा भी—"

"मुझे इसमें क्यों घसीटते हो? विधाताने मेरे रूपको लेकर तो बहुत ज्यादती नहीं की। और मेरी गाडी भी इस लायक नहीं कि तुम्हारी गाडीको मात दे सके।"

अभीक चटसे कुरसी छोड़कर उठ खड़ा हुआ और विभाके पांवके पास बैठकर उसका हाथ थामके कहने लगा, "किससे किसकी तुलना! आश्चर्य हो, आश्चर्य हो तुम! मैं कहता हूं, तुम आश्चर्य हो! मैं तुम्हें देखता हूं और भीतरसे डरता रहता हूं कि किसी दिन चटसे मैं तुम्हारे भगवानको न मान बैठूं! तब फिर मेरा कभी भी किसी कालमें परित्राण नहीं होनेका। तुममें मैं ईर्षा नहीं जगा सका किसी भी तरह। कमसे कम तुमने उसे मुझे जानने नहीं दिया। हालां कि तुम जानती हो—"

"बस, चुप। मैं कुछ नहीं जानती। मैं सिर्फ इतना ही जानती हूं कि अद्भुत हो तुम, अद्भुत हो, सृष्टिकर्ताका अट्टहास्य हो तुम!"

अभीकने कहा, "मुझे तुम मुँह खोलके बताओगी नहीं, पर मैं निश्चित समझ रहा हूं कि शीलाके सम्बन्धमें तुम मेरी साइकॉलॉजी जानना चाहती हो। उसका मुझे घोरतर अभ्यास हो गया है। कम उमरमें जैसे सिगरेटका अभ्यास हुआ था। चक्कर आता था फिर भी छोड़ता नहीं था। मुँहमें

कड़ुई लगती थीं, पर मनमें होता था गर्व। वह जानती है कि किस तरह दिनपर दिन नशेकी मीनाद बढ़ाई जाती है। स्त्रियोंके प्रेममें जो मदिरा है वही मेरे लिए इन्सपिरेशन (प्रेरणा) है। मैं कलाकार ठहरा। और वह ठहरी मेरी 'पालकी हवा'। उसके बिना मेरी तूलिका अटक जायगी बालूके टापूमें। मैं समझ जाता हूं कि मेरे पास बैठनेसे शीलाके हृत्पिण्डमें एक तरहकी लाल रंगकी आग धधकती रहती है, डेन्जर सिग्नल, और उसका तेज प्रवेश करता है मेरी नस-नसमें। इसमें मेरा अपराध न मान लेना, तपस्विनी! सोचती होगी उसमें मेरा विलास है, नहीं जी नहीं, उसकी मुझे जरूरत है।"

"इसीसे तुम्हें इतनी जरूरत है क्राइस्लर-गाडीकी।"

"हां, मैं मानता हूं इस बातको। शीलामें जब गर्व जागता है तो उसकी झलक बढ़ जाती है। स्त्रियोंके लिए इसीलिए तो जुटाने पड़ते हैं इतने गहने-कपड़े। हमलोग चाहते हैं स्त्रियोंका माधुर्य और वे चाहती हैं पुरुषका ऐश्वर्य। उसीकी सुनहली पूर्णतापर उनके प्रकाशका बैकग्राउण्ड है। प्रकृतिका यह षड्यन्त्र है पुरुषोंको बड़ा बनानेके लिए। सच है या नहीं बताओ!"

"हो सकता है सच। पर तर्क इस बातका है कि ऐश्वर्य कहते किसे हैं। क्राइस्लरकी गाड़ीको जो लोग ऐश्वर्य कहती हैं, मैं तो कहूंगी कि वे पुरुषको छोटा बनानेकी तरफ खींचा करती हैं।"

अमीक उत्तेजित होकर बोल उठा, "मालूम है, मालूम है तुम जिसे ऐश्वर्य कहती हो उसीके सर्वोच्च शिखरपर तुम मुझे पहुंचा सकती थीं। तुम्हारे भगवान हमारे बीचमें आ खड़े हुए।"

अमीकका हाथ छुड़ाकर विभाने कहा, "इस एक ही बातको तुम बार-बार मत कहो। मैं तो बराबर उल्टा ही सुनती आई हूं। ब्याह कलाकारके लिए गलेकी फांसी है। इन्सपिरेशनका दम घोंट देता है। तुम्हें अगर मैं बड़ा कर सकती मुझमें अगर वह शक्ति होती, तो—"

अमीकने भीतरसे अपनेको झकझोरते हुए कहा, "कर सकती क्या, किया है। मुझे यही दुःख है कि मेरे उस ऐश्वर्यको तुमने पहचाना नहीं। अगर जान जातीं, तो अपने धर्मकर्मके सब बन्धनोंको तोड़कर मेरी सङ्गिनी होकर

मेरे पास आ खड़ी होतीं; किसी बाधाको नहीं मानतीं। नाव किनारे आकर लगती है किन्तु फिर भी यात्रियोंको तीर्थका घाट ढूंढे नहीं मिलता। मेरी भी ठीक वही दशा है। बी, मेरी मधुकरी, कब तुम मेरा सम्पूर्ण-रूपसे आविष्कार करोगी?"

'जब मेरी तुम्हें कोई जरूरत नहीं रह जायगी।"

"ये-सब अत्यन्त पोली बातें हैं। बहुत-कुछ झूठकी हवासे फुलाई-हुई। स्वीकार करो कि 'मेरे विना नहीं चल सकता' यह जानता-हुआ ही उत्कण्ठित है तुम्हारा सम्पूर्ण शरीर-मन। यह क्या तुम मुझसे छिपाओगी?"

"यह बात कहनेसे भी क्या होता है, और छिपाऊंगी भी क्यों? मनमें चाहे जो भी हो, मैं कगलापन नहीं दिखाना चाहती।"

'मैं चाहता हूं, मैं कगाल हूं। मैं दिन-रात कहूंगा, मैं चाहता हूं, मैं तुम्हींको चाहता हूं।"

"और साथ-साथ यह भी कहोगे कि मैं क्राइस्लर-गाड़ी भी चाहता हूं।"

"यही तो, यही तो जेलेसी है। पर्वतो वह्निमान् धूमात्। बीच-बीचमें जम उठने दो धुआं ईर्षाका, प्रमाणित हो जाने दो प्रेमकी अन्तर्गूढ आगको। बुझा-हुआ 'वलकैनो' नहीं है तुम्हारा मन। ताजा 'विसुवियस' है।"—कहता हुआ खड़ा हो गया अमीक, हाथ उठाकर बोला "हुर्रे!"

"यह क्या लड़कपन कर रहे हो! इसीलिए आये होगे सबेरे-सवेरे, पहलेसे प्लैन बनाकर?"

"हां, इसीलिए। मानता हूं इस बातको। नहीं तो, ऐसे मुग्धको भी जानता हूं किसी-किसीको, जिसे यह घड़ी अभी तुरत बेच सकता हूं बिना आपत्तिके बेजा कीमतपर। पर तुमसे तो मैं सिर्फ दाम लेने नहीं आया, जहां तुम्हारी व्यथाका उत्स है वहां चोट करके अञ्जलि रोपना चाहता था। किन्तु अभागेके भाग्यमें न तो यही बदा था, न वही।"

"कैसे जाना? भाग्य तो हमेशा 'डमी'की तरह खुले ताशका खेल नहीं खेलता। मगर देखो, एक बात तुमसे कहे देती हूं,—तुमने कभी-कभी मुझसे पूछा है कि तुम्हारी लीला देखकर मेरे मनमें कांटा चुभता है या नहीं। सच कहती हूं, चुभता है कांटा।"

अभीक उत्तेजित होकर बोल उठा, "यह तो शुभसवाद है !"

विभाने कहा, "इतने उत्फुल्ल मत होओ। यह जेलेसी नहीं है, अपमान है। लड़कियोंके साथ तुम्हारा यह 'मैं तेरा महमान'-वाला सखापन, यह असभ्य असकोच, इससे सम्पूर्ण स्त्री-जातिके प्रति तुम्हारी अश्रद्धा प्रकट होती है। मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"यह तुम्हारी कैसी बात हुई ! श्रद्धाकी क्या व्यक्तिगत विशेषता नहीं है ? जात-की-जातको जहाँ जो भी दिखाई दे उसीकी श्रद्धा करता फिरूँगा ? मालकी जाँच भी नहीं, एकदम 'होलसेल' (पैकारी) श्रद्धा ! इसीको कहते हैं 'प्रोटेक्शन', व्यवसायमें बाहरसे कृत्रिम टैक्स लगाकर कीमत बढ़ाना।"

"झूठी बहस मत करो।"

"अर्थात् तुम करोगी बहस, मैं न करूँ। ठीक ही कहा है किसीने, 'आया है काल भयकर, नारियाँ करेंगी बात, रहेगा पुरुष निरुत्तर'।"

"अभी, तुम तो सिर्फ बातकी काट करनेकी ताकमें हो। तुम जानते हो अच्छी तरह कि मैं कहना चाहती थी, स्त्रियोंसे स्वभावतः कुछ दूरत्व रखकर चलना पुरुषोंके लिए भद्रता है।"

"स्वभावत. दूरत्व रखना या अस्वभावतः ? सुनो, हमलोग आधुनिक हैं मॉडर्न, नकली भद्रताको नहीं मानते, असली स्वभावको मानते हैं। शीलाको पास बिठाकर खड़खड़ाती-हुई फोर्ट चलाता हूं, स्वाभाविकता तो वहाँ बिलकुल पास-पास होती है। भद्रताके खातिर बीचमें डेढ़-हाथ जगह छोड़ दी जाय तो उससे अश्रद्धा ही की जायगी स्वभावकी।"

"अभीक, तुमलोगोंने अपनी अपेक्षा स्त्रियोंको विशेष मूल्य देकर उन्हें बहुमूल्य बनाया था, अपनी गरजसे ही उनकी कीमत नहीं घटाई। उस कीमतको आज अगर वापस ले लो, तो अपनी खुशीको ही कर दोगे सस्ती, धोखा दोगे अपने ही पावनेको। पर व्यर्थ ही बक रही हूं, मॉडर्न समय ही घटिया है।"

अभीकने जवाब दिया, "घटिया मैं नहीं कहूंगा, कहूंगा वेहया है। प्राचीन कालके वृद्ध शिव आँख मीचके बैठे हैं ध्यानमें, और इस जमानेके

नन्दी-भृङ्गी आईना हाथमें लिये अपने चेहरोंका कर रहे हैं व्यग,—यानी debunking। पैदा हुआ हूं इस कालमें, बमू-भोलानाथका चेला बनकर कपारपर आँखें चढ़कर बैठा नहीं रह सकता, बल्कि नन्दी-भृंगीकी भद्दी-भोंडी मुखाकृतिकी नकल की जाय तो आजकल नाम हो सकता है।"

"अच्छा अच्छा, जाओ नाम करने! दसों दिशाओंमें घूमते फिरो मुँह बिरा-बिराकर। किन्तु उसके पहले एक बात तुम मुझे सच-सच बताओ, तुमसे शह पाकर दुनिया-भरकी लडकियाँ जो तुम्हें लेकर इस तरह खींचातानी करनी हैं, इससे क्या तुम्हारी 'अच्छे-लगने'की धार भोथरी नहीं हो जाती? तुमलोग बात-बातमें जिसे कहते हो thrill, धक्कम-धक्केमें उसे क्या पैरों-तले नहीं रौंदा जाता?"

"तो सच ही कहता हूं, सुनो बी, जिसे कहते हैं thrill, जिसे कहते हैं ecstasy, वह है अव्वल नम्बरकी चीज। तकदीरसे ही मिलती है क्वचित्-कभी। पर, तुम जिसे कह रही हो 'भीड़में खींचातानी, वह है सेकेण्डहैण्ड दूकानका माल, कहीं दागी है तो कहीं फटा-टूटा; मगर बाजारमें वह भी बिकता है, कम दाममें। सर्वोत्कृष्ट चीजके पूरे दाम कितने धनी दे सकते हैं?"

"तुम दे सकते हो, अभीक! अवश्य दे सकते हो, पूरा मूल्य है तुम्हारे हाथमें। किन्तु अद्भुत तुम्हारा स्वभाव है। फटी-पुरानी-मैली चीजोंपर आर्टिस्टोंका कुछ विशेष आकर्षण होता है, कुतूहल होता है। सम्पूर्ण वस्तु तुमलोगोंकी दृष्टिमें picturesgue (चित्रवत्) नहीं होती। जाने दो इन सब व्यर्थकी बहसको। फिलहाल क्राइस्लरके नाटकको जहाँ तक बने आगे बढ़ा दिया जाय।"

इतना कहकर विभा कुरसीसे उठकर बगलके कमरेमें चली गई। और वापस आकर अभीकके हाथमें नोटोंका एक बंडल देती-हुई बोली, "यह लो तुम्हारा इन्स्पिरेशन, सरकार-बहादुरकी छाप-शुदा। पर, इसके लिए तुम मुझे अपनी घडी लेनेके लिए न कहना।"

कुरसीपर सिर रखकर अभीक जमीनपर बैठा रहा। विभाने उसी क्षण

चटसे उसका हाथ खींचकर कहा, "मुझे गलत मत समझो, 'अमी' ! तुम्हारे पास नहीं है, मेरे पास है, – इस मौकेसे—

विभाको रोकते हुए अमीक बोल उठा, "मेरे पास नहीं है, मैं अत्यन्त अभाव-ग्रस्त हूं। तुम्हारे हाथमें है मौका, उसे पूरा करनेका। क्या होगा इन रुपयोंका ?"

विभाने अमीकके हाथपर स्निग्धताके साथ हाथ फेरते हुए कहा, "जो नहीं कर सकती उसका दुःख रह गया हमेशाके लिए मेरे मनमें। जितना कर सकती हूं उसके सुखसे क्यों मुझे वंचित करोगे ?"

"नहीं नहीं नहीं, हरगिज नहीं। तुमसे ही सहायता लेकर शीलाको मैं गाडीमें बिठाकर हवा खिलाता फिरूंगा ? इस प्रस्तावपर तुम मुझे धिक्कार दोगी यही सोचा था, गुस्सा होगी यही थी आशा।"

"गुस्सा क्यों होऊँ ? तुम्हारी शरारत कितनी देरकी है ? यह घातक है शीलाके लिए, तुम्हारे लिए जरा भी नहीं। ऐसा लड़कपन तुम्हारा मैं कितनी बार देख चुकी हूं, मन-ही-मन हँसती रही हूं। जानती हूं कुछ दिनके लिए इस खेलके बगैर तुम्हारा चल नहीं सकता। यह भी जानती हूं कि स्थायी होनेसे और भी अचल हो जायगा। हो सकता है कि तुम कुछ पाना चाहते हो, किन्तु तुम्हें कोई पाये यह तुम नहीं सह सकते।"

"बी, मुझे तुम बहुत ज्यादा जानती हो इसीसे ऐसी घोरतर निश्चिन्त रहती हो। जान गई हो कि मुझे अच्छी लगती हैं लड़कियाँ, किन्तु वह अच्छा-लगना नास्तिकका ही है, उसमें बंधन नहीं, पत्थरके बने मन्दिरमें उसे कैद नहीं करूंगा। बान्धवियोंके साथ गलबहियांके गद्गद-दृश्य कभी-कभी देखे हैं मैंने, उस विह्वल स्त्रैणतासे मेरा जी मिचलाने लगता है। किन्तु स्त्रियाँ मेरे लिए नास्तिककी देवी हैं, यानी आर्टिस्टकी। आर्टिस्ट मुँह बाकर डूब नहीं मारता, वह तैरता है, और तैरकर अनायास ही पार हो जाता है। तुम लोभी नहीं हो, तुम्हारे निरासक्त मनका सबसे बड़ा दान है स्वाधीनता।"

विभाने हँसते हुए कहा, "अपनी 'स्तुति' अभी रहने दो। आर्टिस्ट, तुमलोग बालिग बच्चे हो, अबकी बार जो खेल शुरू किया है उसका खिलौना मेरे ही हाथसे लिया सही।"

"नैव नैव च। अच्छा, एक बात पूछता हूं। अपने ट्रस्टियोंकी मुट्ठीसे यह रुपया तुमने निकाल कैसे लिया?"

"खुलासा बतानेसे शायद तुम खुश नहीं होगे। तुम्हें मालूम है कि अमर बाबूसे मैथमैटिक्स् सीख रही हूं मैं।"

"सभी विषयोंमें तुम मुझसे आगे बढ़ जाना चाहती हो, विद्यामें भी?"

"बको मत, सुनो। मेरे ट्रस्टियोंमें एक हैं आदित्य-मामा। खुद वे फर्स्टक्लास मेडलिस्ट हैं। उनकी धारणा है कि पूरी सहूलियत मिले तो अमर बाबू द्वितीय रामानुजन् हो सकते हैं। उनका हल किया-हुआ एक प्रॉब्लेम उन्होंने आइन्स्टाइनके पास भेजा था, उसका जो जवाब आया उसे मैंने देखा है। ऐसे आदमीको सहायता देनेके लिए यह जरूरी है कि उसके सम्मानकी पूरी तौरसे रक्षा की जाय। इसीसे मैंने कहा, उनसे मैं गणित सीखूंगी। मामा बहुत खुश हुए, ट्रस्टफण्डमेंसे शिक्षा-खाते एक मोटी रकम निकालकर उन्होंने मेरे पास रख दी है। उसीमेंसे मैं उन्हें वृत्ति दिया करती हूं।"

अभीकका चेहरा कैसा-तो एक तरहका हो गया। जरा हँसनेकी कोशिश करते-हुए उसने कहा, "ऐसे आर्टिस्ट भी शायद हैं जो योग्य सहायता मिलनेपर मिकेल अन्जेलोकी कमसे कम दाढ़ीके पास तक पहुंच सकते थे।"

"वे योग्य सहायता न मिलनेपर भी पहुंच सकेंगे। अब बताओ, तुम मुझसे रुपये लोगे या नहीं?"

"खिलौनेके दाम?"

"हां जी, तुमलोगोंको खिलौनेके दाम देते रहना ही तो हमलोगोंका चिरकालका धर्म है। इसमें दोष क्या है। उसके बाद तो फिर घूरा है ही।"

"क्राइस्लरकी आज यहीं श्रद्धा-शान्ति हो गई। प्रगतिशीलाका गतिवेग टूटी-पुरानी फोर्डमें ही लड़खड़ाता-हुआ चलता रहे, मेरी बलासे। अब ये-सब बातें अच्छी नहीं लगतीं। सुना है, अमर बाबू रुपये इकट्ठे कर रहे हैं विलायत जानेके लिए। वहांसे प्रमाण बांध लायेंगे कि 'वे साधारण आदमी नहीं हैं'।"

विभाने कहा, "मैं हृदयसे आशा करती हूं कि ऐसा ही हो। उसमें देशका गौरव है।"

ऊँचे स्वरमें बोल उठा अमीक, "मुझे भी प्रमाणित करना होगा, तुम आशा करो चाहे न करो। उन्हें प्रमाण तो लॉजिकके बँधे रास्तेमें पर मिल जायगा,–आर्टका प्रमाण आविष्कृत होता है रुचिके मार्गने, और वह है रसिक जनोंका प्राइवेट मार्ग। ग्रेण्ड ट्रंक रोड नहीं है वह। मेरा इस आँखोंमें ॲथौरिटी-बाँधे कोल्हू-घुमानेवालोंके ढंगसे काम नहीं चलेगा। जिनके देखनेकी स्वाधीन दृष्टि है, मुझे जाना ही पड़ेगा उनके देशमें। ताकि किसी दिन तुम्हारे मामाको भी कहना पड़े कि मैं भी साधारण आदमी नहीं हूं, और उनकी भानजीको भी—"

"भानजीकी बात मत कहो। तुम मिकेल अन्जेलोके समान मापके हो या नहीं–यह जाननेके लिए उसे किसीकी बाट नहीं देखनी पड़ी। उसके लिए तुम बिना प्रमाणके ही असाधारण हो। अब बताओ, तुम जाना चाहते हो विलायत?"

"यह तो मेरा दिन-रातका स्वप्न है।"

"तो ले लो न, मेरे इस दानको। प्रतिभाके चरणोंमें मेरा यह मामूली-सा राज-कर है।"

"रहने दो, रहने दो अभी इस बातको। कानोंमें सुर ठीक नहीं लग रहा। सार्थक हो गणित-अध्यापककी महिमा। मेरे लिए यह युग न सही, दूसरा युग सही। बाट देखती रहेगी पॉस्टेरिटी। इतना मैं कहे देता हूं, एक दिन आयेगा जब आधी रातको तकियेमें मुँह छिपाकर तुम्हें कहना ही पड़ेगा कि 'उनके नामके साथ मेरा भी नाम गुँथा रह सकता था हमेशाके लिए, किन्तु न हो सका'।"

"पॉस्टेरिटी तक बाट जोहनेकी नौबत नहीं आयेगी, 'अमी'! निष्ठुर दण्ड मुझे मिलने लगा है।"

"किस दण्डकी बात तुम कह रही हो, मुझे नहीं मालूम; किन्तु इतना मैं जानता हूं कि तुम्हारे लिए जो सबसे बड़ा दण्ड है उसे तुमने समझा ही

नहीं, वह है मेरे चित्र। आ रहा है नया युग, उस युगकी वरण-सभामें उड़ीसे बडी आधुनिक चौकीपर मेरे दर्शन तुम्हें नही मिलेंगे।"—इतना कहकर अमीक उठकर चल दिया दरवाजेकी ओर।

विभाने कहा, "जा कहाँ रहे हो ?"

"मीटिंग है।"

"काहेकी मीटिंग ?"

"छुट्टियोंमें विद्यार्थियोंके साथ दुर्गा-पूजा करना है मुझे।"

अमीककी नास्तिकता क्यों इतनी हिंसक हो उठी है, विभा इस बातको जानती है। इसीसे वह उसपर नाराज नहीं हो सकती। किसी भी तरह उससे सोचते नही बनता कि क्या होगा इसका परिणाम। विभाके पास और जो-भी-कुछ है, वह सब दे सकती है ; सिर्फ अटक जाती है पिताकी इच्छाके पास जाकर। पिताकी वह इच्छा तो कोई मत नहीं है, विश्वास नहीं है, तर्कका विषय नहीं है। वह तो उनके स्वभावका अग है। उसका प्रतिवाद नहीं हो सकता। बार-बार उसने सोचा है कि इस बाधाका वह लघन करेगी ; किन्तु अन्ततोगत्वा किसी भी तरह उससे कदम उठाते नहीं बनता।

नौकरने आकर खबर दी, 'अमर बाबू आये हैं।' सुनते ही अमीक उसी दम बडी तेजीसे दनदनाता-हुआ सीढ़ीसे उतरकर चला गया। विभाकी छातीके भीतर ऐंठन शुरू हो गई। पहले तो उसने सोचा कि अध्यापकको कहला दे कि आज पढाई नहीं होगी। किन्तु दूसरे ही क्षण मनको मजबूत करके बोली, "अच्छा, ले आ यहीं।" फिर बोली, "सुन, बैठकमें बिठा उन्हें। आती हूं मैं थोडी देरमें।"

नौकरको विदा करके वह उसी क्षण अपने कमरेमें जाकर बिस्तरपर पड़ गई औंधी होकर। तकियासे लिपटकर लगी रोने।

बहुत देर बाद अपनेको सम्हालकर आँख-मुँह धोकर हँसती-हुई बैठकमें पहुंची, बोली, "आज मनमें आई थी कि छुट्टी मनाऊं।"

"तबीयत ठीक नहीं है क्या ?"

नहीं, तबीयत तो ठीक है। असल बात यह है कि बहुत दिनोंसे

रविवारकी छुट्टी खूनमें घुल-मिलकर एक हो गई है न, रह-रहकर उसका प्रकोप प्रबल हो उठता है।"

अध्यापकने कहा, "मेरे खूनमें अब तक घुसनेका मौका ही नहीं मिला छुट्टीके 'माइक्रोब'को। पर, मैं भी आज छुट्टी लूंगा। कारण समझा दूं। इस साल कोपेनहेगेनमें अन्तर्राष्ट्रीय मैथमेटिक्स् कॉनफरेन्स होगी। मेरा नाम न-जाने कैसे उनलोगोंकी नजरमें आ गया, पता नहीं। भारतमें सिर्फ मुझे ही निमंत्रण मिला है। इतना बड़ा मौका तो हाथसे जाने देना ठीक नहीं।"

विभा उत्साहके साथ बोली, "जरूर, आपको जाना ही होगा।"

अध्यापक जरा मुसकराते-हुए बोले, 'मेरे ऊपरवाले जो मुझे डेपुटेशनमें भेज सकते थे वे राजी नहीं होते, इसलिए कि कहीं मेरा दिमाग न फिर जाय। उनकी उत्कण्ठा मेरे अच्छेके लिए ही है। फिर भी, ऐसे किसी बन्धुकी खोजमें निकलना चाहता हूं मैं, जो बहुत ज्यादा बुद्धिमान न हो। कर्जके बदलेमें जो-कुछ गिरवी रखनेकी आशा दे सकता हूं उसे न तो तराजूमें तौला जा सकता है और न कसौटीपर ही घिसकर दिखाया जा सकता है। हम विज्ञानी-लोग विश्वास करनेके पहले प्रत्यक्ष प्रमाण चाहते हैं, इसी तरह अर्थ-विज्ञानी लोग भी ढूंढते हैं ठोस विषय-वस्तु,—उन्हें धोखा नहीं दिया जा सकता न!"

विभा उत्तेजित होकर बोली, "कहींसे भी हो, एक बन्धु कहींसे-न-कहींसे ढूंढ़ निकालूंगी ही। सम्भवतः वह खूब सयाना न होगा, उसकी आप चिन्ता न करें।"

दो-चार बातोंसे समस्याका समाधान नहीं हुआ। मात्र उस दिनके लिए आधा-परधा समाधान हो गया। अमर बाबू मझोले कदके आदमी हैं; श्यामवर्ण, शरीर दुबला-पतला ललाट चौड़ा, माथेके सामनेकी तरफके बाल धीरे-धीरे घटते जा रहे हैं। चेहरा प्रियदर्शन है, देखनेसे मालूम होता है किसीसे शत्रुता करनेका अवकाश ही नहीं मिला उन्हें। आंखोंमें ठीक अन्यमनस्कता तो नहीं किन्तु दूरमनस्कता जरूर मालूम होती है, अर्थात् रास्तेमें चलते समय उन्हें सुरक्षित रखनेका दायित्व दूसरोंपर ही निर्भर है।

मित्र उनके बहुत कम ही हैं, पर जो दो-एक जाने हैं वे उनके सम्बन्धमें बहुत ही ऊँची आशा रखते हैं, और बाकीके जो जान-पहचानके लोग हैं वे नाक सिकोड़कर उन्हें कहते हैं 'हाइब्राउ'। बातचीत कम करते हैं, लोग इसे समझते हैं हृद्यताकी कमी। मतलब यह कि उनकी जीवनयात्रामें जनता बहुत कम है। और उनकी साइकॉलॉजीके लिए आरामका विषय यह है कि बाहरके लोग उन्हें क्या समझते हैं इस बातको वे जानते ही नही।

अमीकको देनेके लिए विभा आज जो आठ सौ रुपये चटसे निकाल लाई थी, सो केवल एक अन्ध-आवेगके वशीभूत होकर। विभाकी नियम-निष्ठापर उसके मामाका विश्वास अटल है। कभी भी उसका कोई व्यतिक्रम नहीं हुआ। विभाके मामा, सांसारिक विषयोंमें सुदक्ष होनेपर भी, इस बातकी कभी कल्पना ही नहीं कर सकते थे कि स्त्रियोंके जीवनमें नियमके प्रबल व्यतिक्रमका झटका अकस्मात् ही कहींसे आ सकता है। और, इस अकस्मात् होनेवाले अ-कार्यकी सम्पूर्ण सजा और लज्जाको मनमें स्पष्टतासे देखकर ही क्षण-भरकी आँधीके झटकेमें विभाने उपस्थित किया था अपना दान अमीकके सामने। लौटाया-हुआ वह दान फिर नियमकी झोलीमें वापस आ गया है। वर्तमान क्षेत्रमें प्रेमका वह स्पर्धावेग उसके मनमें नहीं है। इसीसे स्वाधिकार लंघन करके किसीको रुपये उधार देनेकी बातको वह साहस करके अपने मनमें भी न ला सकी। इसलिए, उसने तय किया कि मासे उत्तराधिकार-सूत्रमें मिले-हुए कीमती गहनोंको बेचकर जो रुपये आयेंगे उन्हें वह अमरनाथको उपलक्ष्य करके दे देगी अपने देशको।

विभाके घरपर जिन बालक-बालिकाओंका भरण-पोषण हो रहा है, विभा उनकी पढ़ाईमें सहायता करती है। खाने-पीनेके बाद अब तक उसकी क्लास बैठी थी। आज रविवार है। जल्दी छुट्टी दे दी है।

बक्स निकालकर फर्शपर एक हलकी तोशक बिछाकर उसपर एक-एक करके अपने गहने सजा रही थी विभा। अपने परिवारके परिचित जौहरीको बुला भेजा है।

इतनेमें, जीनेमें अमीकके आनेकी आहट सुनाई दी। पहले तो जल्दीसे गहने छिपा देनेकी मनमें आई, किन्तु बादमें ज्योंके त्यों पड़े रहने दिये। किसी भी कारणसे अमीकसे कोई भी बात छिपाना उसके स्वभावके विरुद्ध है।

अमीक घरमें घुसनेके बाद कुछ देर तक खड़ा-खड़ा देखता रहा समझ गया कि माजरा क्या है। बोला, "असाधारणके लिए पार-उतराईकी दिख दिखा रही हो! मेरे लिए तुम हो महामाया बहलाये रखती हो; और अध्यापकके लिए तुम हो तारा, तार देती हो। अध्यापक जानते हैं क्या, अबला नारी अपनी मृणाल-भुजाओंसे उन्हें पार उतारनेकी व्यवस्था कर रही है?"

"नहीं नहीं जानते।"

"जाननेपर क्या उस वैज्ञानिकके पौरुषपर चोट नहीं पहुंचेगी?"

"क्षुद्र जनोंके श्रद्धाके दानपर महान् जनोंका अकुण्ठित अधिकार होता है, मैं तो इतना ही जानती हूं। अपने उस अधिकारसे वे अनुग्रह करते हैं, दया करते हैं।"

"सो तो समझ गया। किन्तु स्त्रियोंके शरीरके गहने हम ही लोगोंको आनन्द देनेके लिए होते हैं, फिर चाहे हम कितने ही साधारण क्यों न हों; किसीके विलायत जानेके लिए नहीं होते, चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न हों। हम जैसे पुरुषोंकी दृष्टिको उन्हें तुमलोगोंने पहलेसे ही भेंट चढ़ा रखा है। यह जो चुन्नी-मोतीका जड़ाऊ हार है इसे एक दिन मैंने तुम्हारे गलेमें देखा था, जब हमारा प्रथम परिचय था बहुत थोड़ा। उस प्रथम-परिचयकी स्मृतिमें यह हार घुल-मिलकर एक हो गया है। यह हार क्या तुम्हारा अकेलेका है, मेरा भी तो है!"

"अच्छा, इस हारको न-हो-तो तुम्हीं ले लेना।"

"तुम्हारी सत्तासे विच्छिन्न करके दिया-हुआ यह हार बिलकुल ही निरर्थक है। वह हो जायगा चोरीका धन। तुम्हारे साथ ही लूंगा उसे मय-समेत, यही आस लगाये बैठा हूं मैं। इस बीचमें इस हारको यदि हस्तान्तरित कर दिया तुमने तो धोखा दोगी मुझे।"

"ये गहने मेरी मा दे गई हैं, मेरे भावी विवाहके यौतुकके लिए।

विवाहको अलग करके इन गहनोंकी क्या सज्ञा होगी ? खैर, किसी शुभ या अशुभ लग्नमें इस कन्याकी सालङ्कारा मूर्ति देखनेकी आशा न करना तुम !"

"अन्यत्र वर स्थिर हो गया है मालूम होता है !"

'हो गया है वैतरणीके किनारे। बल्कि एक काम कर सकती हूं, तुम जिससे ब्याह करोगे उस वधूके लिए अपने इन गहनोंमेंसे कुछ छोड़ जाऊंगी।"

"मेरे लिए शायद वैतरणी-तीरका रास्ता बन्द है ?"

"ऐसा न कहो। सजीव पात्रियां सब जकडे हुए हैं तुम्हारी जन्मपत्री।"

"झूठ नहीं बोलूगा। जन्मपत्रीका इशारा बिलकुल ही असम्भव हो सो बात नहीं। शनिकी दशामें संगिनीका अभाव सहसा सांघातिक हो उठे तो समझ लो कि पुरुषका मृत्युयोग समुपस्थित है।"

"सो हो सकता है, किन्तु उसके कुछ समय बाद ही सगिनीका आविर्भाव ही हो उठता है सांघातिक। तब वह मृत्युयोग हो उठता है सकटमूलक।"

"यानी जिसे कहते हैं बाध्यता-मूलक उद्‌बन्धन। प्रसग है तो यद्यपि हाइपैथेटिकैल, फिर भी सम्भावनाके इतना नजदीक है कि उसपर बहस करना व्यर्थ है। इसीसे कहता हूं कि किसी दिन जब अचानक मौर बांधे मुझे देखोगी 'परहस्त गत धनम्' तब—"

"अब और मत डराओ। तब मैं भी अकस्मात् आविष्कार कर लूंगी कि 'परहस्त'का अभाव नहीं है।"

' छि छि, मधुकरी, बात तो अच्छी नहीं सुनाई दी तुम्हारे मुंहसे। पुरुष लोग तुमलोगोंको 'देवी' कहकर स्तुति करते हैं, क्योंकि उनका अन्तर्धान होनेपर तुमलोग सूखकर मरनेको राजी रहती हो। पुरुषोंको भूलकर भी कोई 'देवता' नहीं कहता। क्योंकि अभावमें पड़ते ही बुद्धिमानोंकी तरह वे अभाव दूर करनेको तैयार रहते हैं। सम्मानके लिए यही तो परेशानी है। एकनिष्ठताकी पदवी बचानेके लिए तुमलोगोंको प्राणोंसे मरना पडता है। साइकॉलॉजीको अभी रहने दो, मेरा प्रस्ताव यह है कि अमर बाबूके अमरत्व-लाभका दायित्व हमलोगोंपर ही छोड़ दो न ! हमलोग क्या उनका मूल्य नहीं समझते ? गहने बेचकर पुरुषको लज्जित क्यों करती हो ?"

"ऐसी बात न कहो, अमीक ! पुरुषोंका यश स्त्रियोंका सबसे बड़ा धन है। जिस देशमें तुमलोग 'बड़े' हो उस देशमें हम भी धन्य हैं।"

'यह देश वही देश हो। तुमलोगोंकी तरफ देखकर यही बात सोचा करता हूं बराबर। इस प्रसंगमें मेरी बात अभी रहने दो, फिर कभी होगी। अमर बाबूकी सफलतामें इर्षा करते हैं ऐसे क्षुद्र आदमी इस देशमें बहुत हैं। इस देशके आदमी बड़े-आदमियोंके लिए महामारी हैं। किन्तु दुहाई है तुम्हें, मुझे उन वामनोंमें न समझ लेना। सुनो, मैंने कितना बड़ा एक क्रिमिनल पुण्यकर्म किया है।—दुर्गा-पूजाके चन्देके रुपये मेरे हाथमें थे। वे रुपये मैंने दे दिये हैं अमर बाबूकी विलायत-यात्राके फण्डमें। और दिये हैं बिना किसीसे पूछे-गछे। जब फगड़ाफोड़ होगा तब 'जीव-बलि' टूटनेके लिए माके भक्तोंको बाजारमें नहीं दौड़ना पड़ेगा। मैं नास्तिक हूं, मैं समझता हूं 'सच्ची पूजा' किसे कहते हैं। वे लोग धर्मात्मा हैं वे क्या समझेंगे !"

"यह तुमने क्या काम किया, अमीक ! तुम जिसे कहते हो पवित्र नास्तिक-धर्म, यह काम क्या उसके योग्य है ? यह तो विश्वासघात है।"

"मानता हूं मैं। किन्तु मेरे धर्मकी भीत किसने कमजोर कर दी थी, सुनो। बड़ी धूमधामके साथ पूजा करनेके लिए मेरे चेलोंने कमर कस ली थी। किन्तु चन्देमें जो मामूली रकम आई, वह जितनी हास्यास्पद थी उतनी ही शोकावह। उससे भोगके बकरोंमें वियोगान्त नाटक नहीं जमता, पचमाऊका लाल रंग हो जाता फीका। मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं थी। तय किया था कि हमलोग खुद ही अपने हाथसे ढोल-ताशे बजावेंगे अजस्र उत्साहके साथ, और कद्दू-कुम्हड़ोंके वक्ष विदीर्ण करेंगे स्वयं अपने हाथसे खड्गाघातसे। नास्तिकके लिए इतना ही यथेष्ट है, किन्तु धर्मात्माओंके लिए नहीं। न-जाने कब गांवके बक्त मुझे बगैर जताये ही उनमेंसे बन गया एक साधु-बाबा, पांच-जने बन गये उसके चेले, और किसी-एक धनी विधवा बुढ़ियाके पास जाकर बोले 'तुम्हारा लड़का जो रंगूनमें काम करता है, जगदम्बाने स्वप्नमें कहा है कि यथेष्ट बकरोंकी बलि और खूब धूमधामसे पूजा न मिली तो माता उसे समूचा ही लील जायेंगी।' बुढ़ियासे उनलोगोंने ऐंठ कस-कसके

पांच हजार रुपये निचोड़े हैं। मैंने जिस दिन सुना, उसी दिन उस रुपयेकी सद्गति कर दी। उससे मेरी जात मारी गई, किन्तु रुपयोंका कलक दूर हो गया। अब तुम्हें किया है मैंने अपना कॉनफेशनल। पाप स्वीकार करके पाप क्षालन कर लिया गया। पाँच हजार रुपयेके बाहर बचे हैं सिर्फ उनतीस रुपये। उन्हें रख छोड़ा है कुम्हड़ेके बाजारका कर्ज चुकानेके लिए।"

इतनेमें सुस्मिने आकर कहा, "बच्चू नौकरका बुखार बढ़ गया है, साथ-साथ खाँसी भी बढ़ती जाती है,—डाक्टर साहब क्या लिख गये हैं सो देख लो।"

विसाका हाथ पकड़कर अमीकने कहा, "विश्व-हितैषिणी, रोग-तापकी परिचर्या करनेमें तो तुम दिन-रात व्यस्त रहती हो, और जिन हतभाग्योंका शरीर बुरी तरह स्वस्थ है उनकी याद करनेकी फुरसत ही नहीं मिलती।"

"विश्व-हित नहीं जी, किसी-एक अति-स्वस्थ भाग्यहीनको भूले रहनेके लिए ही इस तरह इतना काम बनाना पड़ता है। अब छोड़ो, मैं जाऊँ तुम बैठो जरा,—मेरे गहनोंकी सम्हाल रखना।"

"और मेरे लोभको कौन सम्हालेगा?"

"तुम्हारा नास्तिकधर्म।"

कितने ही दिन हुए अमीकके दर्शन ही नहीं। चिट्ठी-पत्री भी कुछ नहीं मिली। विसाका मुँह सूख गया है। किसी काममें मन नहीं लगता। उसकी चिन्ताएँ उलझ गई हैं। क्या हुआ है, क्या हो सकता है, कुछ भी तय नहीं कर पाती। दिन बीत रहे हैं पसली-तोड़ बोझके समान। उसे बार-बार यही सोच होता है कि अमीक उसीपर अभिमान करके चला गया है। वह गृहत्यागी है, उसके कोई बन्धन नहीं, रूठकर लापता हो गया है। शायद अब नहीं लौटेगा। उसका मन बार-बार कहने लगा, 'रूठो मत लौट आओ, मैं अब तुम्हें दुःख नहीं दूंगी।' अमीकका सारा लड़कपन उसकी अविवेचना, उसका लाड़-दुलाड, उसकी जिद जितनी ही उसे याद आने लगी उतने ही आँसू झरने लगे उसकी आँखोंसे, बार-बार अपनेको पाषाणी कहकर धिक्कार देने लगी वह।

इतनेमें, अमीककी एक चिट्ठी आई डाकसे, स्टीमरकी छाप-शुदा। उसने लिखा है :—

जहाजका 'स्टोकर' होकर विलायत जा रहा हूं। इञ्जनमें कोयला झोंकना है। कहता जरूर हूं कि चिन्ता न करना, पर 'चिन्ता कर रही हो' जानकर अच्छा लग रहा है। इतना जताये देता हूं कि इञ्जनके तापमें जलनेका मुझे अभ्यास है। जानता हूं, तुम यह कहकर नाराज होगी कि 'क्यों पाथेयका दावा नहीं किया मुझसे।' इसका एकमात्र कारण यह है कि मैं जो आर्टिस्ट हूं इस परिचयपर तुम्हें जरा भी श्रद्धा नहीं। यह मेरे लिए चिरदुःखकी बात है, किन्तु इसके लिए तुम्हें दोष नहीं दूंगा। मैं निश्चित-रूपसे जानता हूं कि उस रसज्ञ देशके गुणीजन मुझे जरूर स्वीकार कर लेंगे जिनकी स्वीकृतिका असली मूल्य है।

अनेक मूढ़ व्यक्तियोंने मेरे चित्रोंकी अन्याय-रूपसे प्रशंसा की है। और अनेक मिथ्याचारियोंने की है छलना। तुमने मेरा मन बहलानेके लिए कभी भी कृत्रिम स्तुति नहीं की। हालां कि तुम्हें मालूम था कि तुम्हारी जरा-सी प्रशंसा मेरे लिए अमृत है। तुम्हारे चरित्रके अटल सत्यसे मैंने अपरिमेय दुःख पाया है, फिर भी उस सत्यको मैंने बड़ा मूल्य दिया है। एक दिन संसार जब मेरा सम्मान करेगा तब सबसे बढ़कर सम्मान मुझे तुम्हीं दोगी, उसके साथ हृदयकी सुधा मिलाकर। जब तक तुम्हारा विश्वास असन्दिग्ध सत्य तक नहीं पहुंचता तब तक तुम प्रतीक्षा करोगी। इस बातको मनमें रखकर ही आज मैं दुःसाध्य-साधनाके पथपर चल दिया हूं।

अब तक तुम्हें मालूम हो गया होगा कि तुम्हारा हार चोरी हो गया है। उस हारको तुम बाजारमें बेचने जा रही हो — यह चिन्ता मुझसे किसी भी तरह सहन नहीं हुई। तुम पसलियां तोड़कर सेंध मारना चाहती थीं मेरी छातीमें। तुम्हारे उस हारके बदले मैं अपने चित्रोंका एक बंडल तुम्हारे गहनोंके बक्सके पास रख आया हूं। मन-ही-मन हंसो मत। अपने देशमें कहीं भी उन चित्रोंकी फटे-कागजोंसे ज्यादा कीमत नहीं मिलेगी। प्रतीक्षा करो, दी, मेरी मधुकरी, तुम ठगाईमें नहीं रहोगी, हरगिज नहीं। अकस्मात् जैसे फावड़ेके

मुँहके आगे गुप्तधन निकल आता है, मैं दावेके साथ कहता हूं कि ठीक उसी तरह मेरे चित्रोंकी दुर्मूल्य दीप्ति सहसा निकल पड़ेगी। उसके पहले तक हँसना, कारण सभी स्त्रियोंकी दृष्टिमें सब पुरुष बच्चे होते हैं, जिन्हें वे प्यार करती हैं। तुम्हारी स्निग्ध-कौतुककी उस हँसीको अपनी कल्पनामें भरकर लिये जा रहा हूं मैं समुद्रके उस पार। और ले चला हूं तुम्हारे उस मधुमय घरमेंसे एक मधुमय अपवाद। देखा है मैंने, भगवानके आगे तुम न-जाने क्या-क्या प्रार्थना किया करती हो, अबसे तुम यही प्रार्थना करना कि तुम्हारे पाससे चले आनेका दारुण दुःख किसी दिन जरूर सार्थक हो।

तुमने मन-ही-मन मुझसे कभी ईर्षा की है या नहीं, मुझे नहीं मालूम। यह बात सच है कि स्त्रियोंको मैं प्यार करता हूं। ठीक उतना न सही, कमसे कम स्त्रियां मुझे अच्छी लगती हैं। उनलोगोंने मुझसे प्रेम किया है, और वह प्रेम मुझे कृतज्ञ बनाता है। किन्तु इतना तुम जरूर जानती हो कि वह नीहारिका-मण्डली थी, और उसके बीचमें तुम थीं एकमात्र ध्रुवतारा। वे आभास हैं, और तुम हो सत्य। ये सब बातें सेण्टिमेण्टल-सी सुनाई देंगी। और कोई उपाय नहीं, मैं कवि नहीं हूं। मेरी भाषा कदली-वृक्षकी नावके समान है, लहरोंका धक्का लगते ही ज्यादती करने लगती है। जानता हूं मैं कि वेदनाकी जहां गहराई है वहां गम्भीर होना जरूरी है, नहीं-तो सत्यकी मर्यादा जाती रहती है। दुर्बलता चचल है, बहुत दफे मेरी कमजोरी देखकर तुम हँसी हो। इस चिट्ठीमें उसीका लक्षण देखकर जरा मुसकराके तुम कहोगी, 'यह तो ठीक अपने अभीक जैसा ही भाव है।' किन्तु अबकी बार शायद तुम्हारे मुँहपर हँसी नहीं आयेगी। तुम्हें मैं पा नहीं सका—इसके लिए मैंने बहुत ऊहापोह किया है, पर हृदयके दानमें तुम जो कजूस हो! इसके बराबर इतना बड़ा अविचार और कुछ हो ही नहीं सकता। असलमें, इस जीवनमें तुम्हारे आगे मेरा सम्पूर्ण प्रकाश नहीं हो सका। और शायद कभी होगा भी नहीं। इस तीव्र अतृप्तिने मुझे ऐसा कंगाल कर रखा है। इसीलिए, और कुछ चाहे विश्वास करूं या न करूं, सम्भवतः जन्मान्तरमें विश्वास करना ही पड़ेगा। तुमने स्पष्ट-रूपसे मुझे अपना प्रेम नहीं जताया, किन्तु अपनी

स्वप्नाकी गभीरतासे प्रतिक्षण जो तुमने मुझे दान किया है, यह नास्तिक उसे कोई संज्ञा नहीं दे सका ; 'अलौकिक' कहा है। इसीके आकर्षणसे किसी एक तरह शायद तुम्हारे साथ-साथ तुम्हारे भगवानके ही आसपास फिरता रहा हूं। ठीक नहीं मालूम। हो सकता है कि सब बनावटी बात हो। किन्तु हृदयमें एक गुप्त जगह है हमारे अपने ही अगोचरमें ; वहां प्रबल आघात लगनेसे बात अपने-आप बन-बनकर निकला करती है, हो सकता है कि वह ऐसा कोई सत्य हो जिसे इतने दिनों तक स्वयं ही नहीं समझ सका।

बी, मेरी मधुकरी, संसारमें सबसे ज्यादा प्यार किया है तुम्हींको। उस प्यारकी कोई एक असीम सत्य-भूमिका है—ऐसा अगर मान लिया जाय, और उसीको अगर कहो कि वही तुम्हारा ईश्वर है, तो उनका द्वार और तुम्हारा द्वार एक ही बना रहा इस नास्तिकके लिए। फिर मैं वापस आऊंगा,—तब मेरा मन, मेरा विश्वास, अपना सब-कुछ आंख मींचकर समर्पण कर दूंगा तुम्हारे हाथमें। तुम उसे पहुंचा देना अपने तीर्थपथके शेष ठिकानेपर, जिससे बुद्धिकी बाधासे एक क्षणका भी विच्छेद न हो तुम्हारे साथ फिर कभी। तुमसे दूर आकर आज प्रेमकी अचिन्तनीयता उज्ज्वल हो उठी है मेरे मनमें, युक्ति-तर्कके कांटोंका घेरा आज तुमने पार करा दिया है मुझे,—आज मैं देख रहा हूं तुम्हें लोकातीत महिमामें। अब तक समझना चाहा था बुद्धिसे, अब पाना चाहता हूं अपने सर्वस्वसे।

तुम्हारा
नास्तिक भक्त
अभीक

आश्विन, १९९६]

आखिरी बात

जीवनके बहते-हुए गँदले-रंगके लवडधोंधोंके प्रवाहमें सहसा कहानी जहाँ अपना रूप ग्रहण करके हाल-की-हाल दिखाई देती है, उसके बहुत पहलेसे ही नायक-नायिकाएँ अपने परिचयका सूत्र गूंथती आती हैं। पीछेसे उस पूर्व-कथाकी इतिहास-धाराका अनुसरण करना ही पड़ता है। इसीसे कुछ समय चाहता हूं, 'मैं कौन हूं' इस बातको स्पष्ट करनेके लिए। पर, नाम-धाम छिपाना पड़ेगा। नहीं-तो जान-पहचानवालोंमें जवाबदेही सम्हालते-सम्हालते नाकों दम आ जायगा। क्या नाम लूं, यही सोच रहा हूं। रोमाण्टिक नामकरणके द्वारा शुरूसे ही कहानीको वसन्त-रागके पंचम सुरमें नहीं बांधना चाहता। 'नवीनमाधव' नाम शायद चल सकता है। उसके असली सांवले रंगको धो-पोंछकर किया जा सकता था 'नवारुण सेनगुप्त', किन्तु तब वह वास्तव-सा नहीं सुनाई देता, और कहानी भी नामकी बड़ाई करके लोगोंका विश्वास खो बैठती। और लोग समझते कि मांगा-हुआ जामेवार ओढ़कर साहित्य-सभामें नवाबी करने आया है।

मैं बंगालके क्रान्तिकारियोंमेंसे एक हूं। ब्रिटिश-साम्राज्यकी महाकर्षण-शक्तिने अण्डमन-तटके बहुत नजदीक तक खींचा था मुझे। अनेक कुटिल मार्गोंसे 'सी॰ आई॰ डी॰' के फन्दोंसे बचता-हुआ अफगानिस्तान तक चला गया था। अन्तमें जा पहुंचा अमेरिका, जहाजमें खलासीके कामपर बहाल होकर। पूर्व-बंगीय जिद थी मिजाजमें, एक दिनके लिए भी भूला नहीं इस बातको कि भारत-माताके हाथ-पांवकी हथकड़ी-बेड़ियोंपर रेती घिसनी ही होगी दिन-रात जब तक जीवन है। किन्तु विदेशमें कुछ दिन रहनेके बाद एक बात निश्चित-रूपसे समझ गया कि हमलोगोंने जिस पद्धतिसे क्रान्तिका खेल शुरू किया है, मानो वह दीवालीकी पटाकेबाजी है, उसने हमारे जले भाग्यको जलाया ही है बार-बार, ब्रिटिशके राज-सिंहासनपर एक दाग भी नहीं पड़ा कहीं। अग्नि-शिखापर पतंगेकी अन्ध आसक्ति है यह। दर्पके साथ जब उसमें कूदा था तब समझ ही नहीं पाया था कि उसमें इतिहासका

यज्ञानल नहीं जलाया जा रहा, जलाई जा रही हैं अपनी ही वहुत-सी छोटी छोटी चिताग्नियां। ठीक इसी समय युरोपीय महासमरका भीषण प्रलय-रूप अपने अति-विपुल आयोजन-समेत आंखोंके सामने दिखाई दिया मुझे; और तव मेरे मनसे यह दुराशा कभी लुप्त हो गई कि ऐसा युगान्तर-साधक ध्वंस-यज्ञ, जिसकी हमलोगोंने कल्पना कर रखी थी, हमारे घास-फूसके घरोंमें भी सम्भव हो सकता है। देखा कि समारोहके साथ आत्महत्या करने-लायक भी आयोजन नहीं हमारे घरमें। तव फिर निश्चय किया कि राष्ट्रीय दुर्गकी नींव पक्की करनी होगी पहले। और स्पष्ट समझ लिया कि अगर हम जीना चाहते हैं तो आदिम युगके दोनों हाथोंमें नाखून जितने हैं उनसे लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। इस युगमें यंत्रके साथ यन्त्रको करनी होगी जवरदस्त होड। चाहे-जैसे मर मिटना आसान है, किन्तु विश्वकर्माकी चेलागीरी करना आसान नहीं। अधीर होनेसे कोई लाभ नहीं, जड़से ही काम शुरू करना होगा, — मार्ग लम्बा है, साधना है कठिन।

दीक्षा ले ली यन्त्रविद्याकी। डेट्रॉयेटमें फोर्डके मोटर-कारखानेमें किसी तरह जा घुसा। हाथ पक्का रहा था, किन्तु मालूम होता था काफी आगे वढ रहा हूं। एक दिन क्या दुर्बुद्धि हुई, सोचा कि फोर्डको अगर जरा आभास दू कि मेरा उद्देश्य अपनी व्यक्तिगत उन्नति करना नहीं, देशकी रक्षा करना है, तो स्वाधीनताका पुजारी अमेरिकाकी धन-सृष्टिका जादूगर शायद खुश होगा, और शायद मेरा मार्ग भी प्रशस्त कर देगा। किन्तु फोर्ड भीतर-ही-भीतर हँसकर वोला, 'मेरा नाम हेनरी फोर्ड है, पुराना अंग्रेजी नाम है यह। हमारे इंग्लैण्डके ममेरे भाई लोग किसी कामके नहीं, उन्हें मैं कामका वनाऊंगा। यही संकल्प है मेरा।' मैंने सोचा था कि एक भारतीयको भी 'कामका आदमी' वनानेमें उसके उत्साह हो तो हो भी सकता है। एक वात मेरी समझमें आ गई कि रुपयेवालोंकी सहानुभूति रुपयेवालोंपर ही होती है। और फिर देखा कि वहां मोटरके चक्के वनानेके चक्करमें शिक्षा ज्यादा आगे नहीं वढ़ सकती। इसी सिलसिलेमें और एक विषयमें आंखें खुल गई, देखा कि यंत्र-विद्याकी शिक्षाके लिए और भी जड़में जाना चाहिए; यन्त्रके लिए कच्चा

माल-मसाला जुटाना सीखना चाहिए। धरणीने शक्तिशालियोंके लिए एकत्र कर रखे हैं अपने दुर्गम जठरमें खनिज-पदार्थ। संसारके शक्तिशालियोंने पहले इसीपर दिग्विजय किया है; और गरीबोंके लिए है उसके ऊपरके स्तरपर फसल,—हाड़ निकल आये हैं उनकी पसलियोंके, भीतरको धस गये हैं उनके पेट। मैं जुट पड़ा खनिज-विद्या सीखनेमें। फोर्डने कहा था कि अंग्रेज किसी कामके आदमी नहीं, उसका प्रमाण मिल गया भारतवर्षमें। एक दिन हाथ लगाया था उनलोगोंने नीलकी खेतीमें, फिर लगाया था चायकी खेतीमें। सिविलियनोंने दफ्तरोंमें तगमा-शुदा 'लॉ ऐण्ड आर्डर'की व्यवस्था तो कर ली, पर भारतके विशाल अन्तर्भण्डारकी सम्पदाका वे उद्‌घाटन नहीं कर सके, न तो मानव-चित्तका और न प्रकृतिका। बैठे-बैठे पटसनके किसानोंका खून निचोड़ते रहे हैं। जमशेद टाटाको सलाम किया मैंने समुद्रके उस पारसे। और तय कर लिया कि अब पटाकेवाजीका खेल नहीं खेलूंगा। सेंध मारने जाऊंगा पातालपुरीकी पत्थरकी प्राचीरमें। माके आँचलसे लगे-रहनेवाले बूढ़े बच्चोंके दलमें शामिल होकर 'मा मा' ध्वनिमें मन्तर नहीं पढूंगा, और अपने गरीब देशवासियोंको भूखे लाचार अशिक्षित दरिद्र ही मानूंगा; 'दरिद्र-नारायण' आदि कह-कहकर उनके नामपर मत्र नहीं बनाऊंगा। कम उमरमें ऐसे वचनोंका गुड्डा-गुड़ियोंका खेल बहुत खेल चुका हूं; कवियोंके कुम्हार-घरोंमें देशकी जो पन्नी-लगी मूर्ति गढ़ी जाती है, उसके सामने बैठकर बहुत आंसू बहाये हैं। किन्तु अब नहीं, इस जाग्रत बुद्धिके देशमें आकर वास्तवको वास्तव मानकर ही सूखी आंखोंसे कमर बांधके काम करना सीखा है मैंने,—अबकी बार देश जाकर निकल पड़ेगा यह विज्ञानी बंगाली, फावड़ा लेकर कुल्हाड़ी लेकर हथौड़ा लेकर गुप्तधनकी खोजमें। कविके गद्‌गदकण्ठके चेले मेरे इस कामको पहचान ही न सकेंगे कि यह 'देशमाताकी पूजा' है।

फोर्डके कारखानेसे निकलकर उसके बाद नौ साल बिताये मैंने खनिज-विद्या सीखनेमें। युरोपके नाना केन्द्रोंमें घूमा हूं, अपने हाथसे काम करके प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त किया है, दो-एक यंत्र खुद भी बनाये हैं,—उसमें उत्साह

दिया है अध्यापकोंने, अपनेपर विश्वास हो गया है, और धिक्कार दिया है भूतपूर्व मन्त्रमुग्ध अकृतार्थ अपनेको।

मेरी छोटी कहानीके साथ इन-सब बड़ी-बड़ी बातोंका कोई खास सम्बन्ध नहीं, छोड़ देनेसे भी चल जाता, शायद अच्छा ही होता। किन्तु इस सिलसिलेमें और भी एक बात कहनेकी जरूरत थी, उसे कहता हूं। यौवनके आरम्भमें नारी-प्रभावके 'मैग्नेटिज्म'से जीवनके मेरु-प्रदेशके आकाशमें जब 'अरोरा'की रंगीन घटाका आन्दोलन होता रहता है तब मैं था अन्यमनस्क, बिलकुल कमर-बांधे अन्यमनस्क। 'मैं सन्यासी हूं', 'मैं कर्मयोगी हूं' इन सब वाणियोंसे मनका अर्गल कसके लगा रखा था। कन्या-दायग्रस्त गृहस्थगण जब मेरे आसपास चक्कर लगाने लगे तो मैंने उनसे साफ-साफ ही कह दिया था कि 'कन्याकी जन्मपत्रीमें यदि अकालवैधव्य-योग हो तभी उन्हें मेरी बात सोचनी चाहिए।'

पाश्चात्य देशोंमें नारी-संगसे बचावके लिए कोई मेड़ या दीवार नहीं है। वहां मेरे लिए दुर्योगकी विशेष आशंका थी। 'मैं पुरुष हूं' यह बात देशमें रहते-हुए नारियोंके मुंहसे आंखोंकी भाषाके सिवा और-किसी भाषामें सुननेकी सम्भावना नहीं थी, इसीसे यह तथ्य मेरी चेतनाके बाहर पड़ा था। विलायत जाकर ज्यों ही आविष्कार किया कि साधारण लोगोंकी तुलनामें मेरी बुद्धि ज्यादा है, त्यों ही ताड़ लिया गया कि मैं देखनेमें भी अच्छा हूं। मेरे स्वदेशी पाठकोंके मनमें ईर्षा पैदा कराने लायक बहुत-सी कहानियोंकी भूमिका दिखाई दी थी, किन्तु मैं हलफ उठाकर कहता हूं कि मैंने उनके हाव-भावके जादूमें अपने मनको क्तई नहीं जमने दिया। हो सकता है कि मेरा स्वभाव रूखा हो और पश्चिम-बंगालके शौकीनोंके समान भावुकताकी तरीसे आर्द्रचित्त भी मैं न होऊं; कारण अपनेको पत्थरका सन्दूक बनाकर मैंने उसमें अपने सकल्पको बांध रखा था। और लड़कियोंके साथ रसका खेल शुरू करके उसके बाद मौका देखकर खेल खतम कर देना, यह भी मेरे स्वभावके विरुद्ध था। मैं निश्चित जानता था कि जिस जिदको लेकर मैं अपने मनके आश्रयमें जीवित हूं, एक कदम फिसलते ही उस जिदको लेकर ही मुझे अपने खण्डित

व्रतके नीचे पिसकर मर जाना होगा। मेरे लिए इन दोनोंके बीच बचाव या धोखाधड़ीका कोई रास्ता नहीं था। इसके सिवा मैं जन्मसे ही गाँवका गँवार हूं, स्त्रियोंके सम्बन्धमें मेरा पुराना सकोच मिटना ही नहीं चाहता। यही वजह है कि जो लोग स्त्रियोंके प्रेमके सम्बन्धमें अहंकार करते हैं उनकी मैं अवज्ञा करता हूं।

मुझे विदेशी अच्छी डिग्री ही मिली थी। किन्तु यह जानकर कि यहाँ वह डिग्री सरकारी काममें नहीं आयेगी, छोटे-नागपुरके एक चन्द्रवंशी राजाके यहाँ, मान लो कि चण्डवीर सिंहके दरबारमें, काम करने लगा। सौभाग्यसे उनके पुत्र देविकाप्रसाद कुछ दिन केम्ब्रिजमें पढ़ आये थे। दैवसे उनके साथ मुलाकात हो गई थी जुरिकमें, और वहाँ मेरी ख्याति पहुंच गई थी उनके कानों तक। उन्हें मैंने अपना प्लैन समझा दिया था। सुनकर वे बहुत उत्साहित हुए थे। यहाँ आनेपर उन्होंने मुझे अपने स्टेटमें जियॉलॉजिकल सर्वेके काममें लगा दिया। ऐसा काम किसी अंग्रेजको न देनेसे ऊपरी स्तरका वायुमण्डल विक्षुब्ध हो गया था। किन्तु देविकाप्रसाद थे जिद्दी आदमी और मिजाज भी था कड़ा। वृद्ध राजाका मन डगमगानेपर भी मैं टिक गया।

यहाँ आनेके पहले माने मुझसे कहा, "बेटा, अच्छा काम मिल गया है, अब व्याह कर लो। मेरी बहुत दिनोंकी मनसा पूरी हो जायगी।" मैंने कहा, "यानी अच्छे कामको मिट्टी कर दूं। मेरा जो काम है उसके साथ व्याहका ताल नहीं मिलेगा।" मेरा दृढ सकल्प था, माका अनुनय व्यर्थ हो गया। यन्त्र-तन्त्र सब बाँध-बूँधकर चल दिया जंगल-जंगल घूमने।

अबकी बार मेरी देशव्यापी कीर्ति-सम्भावनाके भावी दिगन्तमें सहसा जो कहानी फूट निकली, उसमें लूकका चेहरा भी है और शुक्र-ताराका भी। नीचेके पत्थरोंसे प्रश्न करता-हुआ मिट्टीकी खोजमें घूम रहा था जगल-जगल। पलाश-फूलके रंगीन नशेमें तब आकाश था विभोर। शाल-वृक्षोंमें मजरियाँ लग रही हैं, और उनपर मधुमक्खियोंके झुण्ड मड़रा रहे हैं। व्यवसायी लोग जो संग्रह करनेमें जुट पड़े हैं। बेरके पत्तोंपरसे इकट्ठा कर रहे हैं तसर- रेशमके कोए। सन्थाल लोग बीन रहे हैं महुआ-फल। झरझर-कलकल

शब्द करती-हुई हल्के नाचका दुपट्टा-सा घुमाकर बहती चली जा रही है छरछरे बदनकी नदी। मैंने उसका नाम रखा था 'तनिका'। यह कारखाना नहीं, कालेजका क्लास भी नहीं, यह तो उस सुख-तन्द्राका धुँधले प्रदोषका राज्य है जहाँ मानव-मनको अकेला पा जानेपर प्रकृति-मायाविनी उसपर रंगरेजिनका काम करने लगती है, जैसे वह सूर्यास्तके पटपर करती है।

मेरे मनपर जरा आवेगका रंग चढ़ गया था। मन्थर हो आई थी कामकी चाल। अपने ऊपर नाराज हुआ था, और भीतरसे जोर लगा रहा था पतवारपर, मनमें सोच रहा था, ट्रॉपिकल आब-हवाकी मकड़ीके जालमें फँस गया शायद। शैतान 'ट्रॉपिक्स' इस देशमें जन्मसे ही अपने पखेकी हवासे हारका मंत्र चला रही है हमारे खूनमें। बचना होगा उसके पसीनेसे भीगे जादूसे।

दिन डूबनेको है। एक जगह, बीचमें रेतीका टापू छोड़कर, नदी दो भागोंमें विभक्त होकर बह रही है। उस रेतीके टापूपर स्तब्ध-हुई बैठी है बगुलोंकी पंक्ति। दिनान्तके समय रोज यह दृश्य मुझे इशारा किया करता अपने कामसे मुँह मोड़नेके लिए। झोलीमें पत्थर-मिट्टीके नमूने लेकर मैं जा रहा था बँगलेकी तरफ, वहाँ लेबोरेटरीमें परीक्षा करनेके लिए। अपराह्ण और सन्ध्याके बीच दिनका जो फालतू हिस्सा है पड़ती जमीनके समान, अकेले आदमीके लिए उससे बचकर चलना कठिन है। खासकर निर्जन वनमें। इसीसे मैंने उस समयको लगा दिया है पत्थर-मिट्टीकी परखके काममें। डाइनामोसे बिजली-बत्ती जला लेना और केमिकेल माइक्रोस्कोप, स्केल वगैरह लेकर बैठ जाता। किसी-किसी दिन रातके बारह-एक तक बज जाते। आज मेरी खोजमें एक जगह 'मैंगनिज'का लक्षण-सा पकड़ाई दिया था। इसलिए बड़े उत्साहके साथ तेजीसे बँगलेकी तरफ जा रहा था। कौए मेरे सरके ऊपरसे गेरुआ-रंगके आकाशमें काँव-काँव करते-हुए अपने नीड़ोंको जा रहे थे।

ठीक इसी समय अकस्मात् बाधा आ पड़ी मेरे मकानपर लौटनेमें। पाँच शाल-वृक्षोंका एक व्यूह-सा था जंगलके एक टीलेके ऊपर। उस वेष्टनीमें कोई बैठा हो तो उसे सिर्फ एक सँधमेंसे देखा जा सकता था, सहसा निगाह चूकनेकी

ही सम्भावना अधिक थी। उस दिन मेघोंमेंसे एक आश्चर्यकारी दीप्ति फूटी पड़ रही थी। वनके उस शाल-व्यूहकी सँधकी छायाके भीतरका रंगीन आलोक ऐसा लगता था जैसे दिगङ्गनाके आंचलमें वँधी स्वर्णरेणु बिखर पड़ी हो। उस आलोकके बीचमें बैठी-हुई है एक तरुणी, पेडके तनेसे पीठ टेके, दोनों पैर छातीके पास सिकोड़कर एकाग्र चित्तसे कुछ लिख रही है अपनी डायरीमें। क्षण-मात्रमें मेरे आगे प्रकट हो उठा एक अपूर्व विस्मय। जीवनमें ऐसी घटना दैवसे ही घटती है कचित्-कभी। पूर्णिमाकी ज्वारके समान मेरे हृदय-तटपर धक्का देने लगी उस विस्मयकी लहरें।

एक पेड़की ओटमें खड़ा-खड़ा देखता रहा उस दृश्यको ; एक आश्चर्यमयी चित्र-सा चिह्नित होने लगा मेरे मनके चिरस्मरणीय-आगारमें। मेरे अपने विस्तृत अनुभव-पथपर मेरा मन बहुत बार अप्रत्याशित मनोहर द्वारके पास जा-जाकर रुका है, मैं कतराकर निकल गया हूं, किन्तु आज ऐसा मालूम हुआ कि शायद मैं जीवनके किसी चरम संस्पर्शमें आ पहुंचा हूं। इस तरह सोचना इस तरह कहना मेरे लिए बिलकुल अनभ्यस्त है। जिस आघातसे मनुष्यका बिन-जाना एक अपूर्व स्वरूप हुड़का खोलकर बाहर निकल पड़ता है वह आघात मुझे लगा कैसे? अपनेको मैं शुरूसे जानता हूं कि मैं पहाडके समान ठोस हूं, मजबूत हूं। और आज, भीतरसे छलक उठा भरना!

तबीयत चाहती थी कि कुछ बात करूं, किन्तु मनुष्यके साथ सबसे बड़ी बातचीत करनेके लिए पहला शब्द क्या होना चाहिए, मैं सोचकर तय न कर सका। एक वाणी है क्रिश्चियन पुराणमें, प्रथम सृष्टिकी वाणी, 'प्रकाश जाग उठे, अव्यक्त हो उठे व्यक्त।' क्षण-भरके लिए ऐसा लगा कि लड़की,—उसका असल नाम बादमें मालूम हो गया था, पर उसे मैं व्यवहारमें न लाऊंगा, मैंने उसका नाम रखा है 'अचिरा'। मानी क्या? मानी यही कि जिसका प्रकाश होनेमें विलम्ब नहीं हुआ, बिजलीके समान। रहा यही नाम। लडकीका मुह देखकर ऐसा लगा कि उसे मालूम पड़ गया है कि कोई खड़ा है पेड़की ओटमें। उपस्थितिकी कोई नीरव ध्वनि है शायद। लिखना बन्द कर दिया है उसने, किन्तु उठते नहीं बन रहा। इस डरसे कि भागना कहीं बहुत ज्यादा

स्पष्ट न हो जाय। एक बार सोचा कि कहूं, 'माफ कीजियेगा' — किन्तु क्या माफ करे, क्या अपराध है, क्या कहूं उससे ? कुछ अलग जाकर विलायती नाटी कुदालसे मिट्टी खोदनेका बहाना किया, झोलीमें कुछ भरा, बिलकुल फालतू चीज। उसके बाद झुककर जमीनपर विज्ञानी दृष्टि फेरता हुआ चल दिया। किन्तु इतना मैं निश्चयसे कह सकता हूं कि जिसे मैंने धोखा देनेके लिए इतना किया उसने जरा भी धोखा नहीं खाया। लुब्ध पुरुष-चित्तकी कमजोरियोंके और-भी अनेक प्रमाण उसे और-भी बहुत बार मिल चुके हैं, इसमें सन्देह नहीं। फिर भी मैंने आशा की कि मेरे विषयमें उसने मन-ही-मन कुछ आनन्द ही पाया होगा। इससे तो बल्कि आड़को और भी जरा लांघ जाता तो,—तो क्या होता क्या मालूम। नाराज होती, या नाराजीका अभिनय करती ? अत्यन्त चंचल मन लेकर चला जा रहा था बंगलेकी ओर, इतनेमें सहसा निगाह पड गई फटे-हुए एक लिफाफेके दो टुकडोंपर। इसे जिओलॉजिकल नमूना नहीं कहा जा सकता। फिर भी उठाकर देखने लगा। पता लिखा था, भवतोष मजुमदार आई० सी० एस०, छपरा। स्त्रीके हाथकी लिखावट है। टिकट लगे-हुए थे, पर डाकखानेकी छाप नहीं थी। जैसे कुमारीकी दुविधा हो। मेरी विज्ञानी बुद्धि ठहरी ; स्पष्ट समझ गया कि इन फटे-हुए लिफाफेमें एक ट्रेजिडीका क्षतचिह्न है। पृथिवीके फटे स्तरोंमेंसे उसके विप्लवका इतिहास ढूंढ़ निकालना हमारा काम है। मेरे सन्धान-पटु हाथोंने उसी क्षण उन फटे लिफाफेका रहस्य आविष्कार करनेका संकल्प कर डाला।

अब सोच रहा हूं, अपने अन्तःकरणके अभूतपूर्व रहस्यके विषयमें। किसी किसी विशेष अवस्थाके संस्पर्शसे आदमीके मनकी भाव-धारा कैसा नवीन रूप लेकर प्रवाहित होने लगती है, अबकी बार उसके परिचयसे विस्मित हो गया। अब तक जो मन नाना कठिन अध्यवसाय लिये-हुए शहरोंमें जीवनका लक्ष्य ढूंढ़ता फिरा है उसीको स्पष्टरूपसे जान सका था, सोचा था वही मेरा वास्तविक स्वभाव है, उसके आचरणके स्थायित्वके विषयमें मैं हलफ उठा सकता था। किन्तु उसमें बुद्धि-शासनसे बहिर्भूत जो एक मूढ़ छिपा-हुआ था, उसे आज मैंने पहले-पहल ही देखा। पकड़ाई दे गया अरण्यक, जो युक्तिको नहीं मानता,

मोहको मानता है। वनकी एक माया है, पेड़-पौधोंका निःशब्द षड़यंत्र, आदिम प्राणकी मन्त्रध्वनि। दिन-दहाड़े झंकृत होता रहता है उसका उदात्त स्वर, गहरी रातमें गूंजती रहती है उसकी मन्द्र-गम्भीर ध्वनि, जीव-चेतनामें होता रहता है गुंजन, आदिम प्राणकी गूढ़ प्रेरणा बुद्धिको कर देती है आविष्ट।

जिऑलॉजीकी चर्चामें ही भीतर-ही-भीतर इस अरण्यक मायाका काम चल रहा था। ढूंढ़ रहा था रेडियमके कण, कंजूस पत्थरोंकी मुट्ठीमेंसे किसी तरह अगर निकाला जा सके। किन्तु दिखाई दी अचिरा, कुसुमित शाल-वृक्षके छायालोकके वन्धनमें। इसके पहले भी मैंने भारतीय नारीको देखा है, निस्सन्देह। किन्तु सब-कुछसे अलग इस तरह एकान्त-रूपसे देखनेका मौका नहीं मिला। यहाँ उसकी श्यामल देहकी कोमलतामें वनके वृक्ष-लता और पत्तोंने अपनी भाषा मिला दी है। विदेशिनी रूपवतियाँ तो बहुत देखी हैं, और बहुत अच्छी भी लगी हैं। किन्तु भारतीय तरुणीको मानो यहाँ पहले पहल देखा, जिस जगह उसे सम्पूर्ण-रूपसे देखा जा सकता है; इस निभृत वनमें वह नाना परिचित-अपरिचित वास्तवके साथ घुल-मिलकर एक नहीं हुई है। देखकर ऐसा नहीं लगता कि वह वेणी हिलाती-हुई डायोशिनमें पढ़ने जाती है, या बेथून कालेजकी डिग्री-धारिणी है, अथवा बालीगंजकी टेनिस-पार्टीमें उच्च कलहास्यके साथ चाय-बिस्कुट परोसती है। बहुत दिन पहले बचपनमें हारू ठाकुर और राम बसुके गीत सुने थे और उन्हें भूल भी चुका था; वे गीत आजकल रेडिओमें नहीं बजते, और न ग्रामोफोनमें बजकर मुहल्लेको ही मुखरित करते हैं,—मालूम नहीं क्यों आज ऐसा लगा कि अचिराके रूपकी भूमिका मानो उन्हीं गीतोंकी सहज रागिणीमें है। 'याद रहेगी सखी हियकी व्यथा'—इस गीतके सुरमें जो एक करुण चित्र है वह आज रूप लेकर मेरी आँखोंके सामने स्पष्ट उद्भासित हो उठा। यह भी सम्भव हुआ। कैसे प्रबल भूमिकम्पमें पृथ्वीके नीचे छिपी-हुई अग्नेय-सामग्री ऊपर आ जाती है, जिऑलॉजी-शास्त्रमें पढ़ चुका हूं; और आज अपनेमें देखा नीचे दबी-हुई अन्धकारकी तप्त-विगलित वस्तुको सहसा ऊपरके आलोकमें। कठोर विज्ञानी नवीनमाधवके अटल अन्तस्तलमें ऐसे उलट-फेरकी मैंने कभी भी आशा नहीं की थी।

अब समझ रहा हूं, जब मैं रोज शामके पहले उस रास्तेसे अपने कामसे लौटता था तो वह मुझे देखती थी, अन्यमनस्क मैंने उसे नहीं देखा। विलायत जानेके बादसे अपने चेहरेपर मुझे कुछ गर्व-सा हो गया है। 'ओ, हाउ हैण्डसम!' इस प्रशस्तिकी कानाफूसीका मैं आदी हो गया था। किन्तु विलायतसे लौटे-हुए अपने किसी-किसी मित्रसे मैंने सुना है, 'बंगाली लड़कियोंकी रुचि ही भिन्न है. पुरुषोंके रूपमें वे मुलायम स्त्रैण रूप ही ढूंढती हैं।' बंगलामें एक कहावत भी है 'कार्तिक-सा चेहरा'। बंगाली कार्तिक और जो-भी कुछ हो, देव-सेनापति हरगिज नहीं। पैरिसमें एक बान्धवीके मुंहसे सुना था, 'विलायती सफेद रंग तो रंगका अभाव है, ओरिएण्टलके शरीरपर गरम आकाश जो रंग चढ़ा देता है वह सचमुचका रंग है, वह छायाका रंग है, वह रंग हमलोगोंको अच्छा लगता है।' यह बात शायद बंगोपसागरके तटके लिए नहीं लागू होगी। आज तक ये सब बातें मेरे मनमें उठी ही नहीं। इधर कई दिनोंसे मेरे मनको ऐसी ही बातें घेरे रहती हैं। घाममें जला-हुआ रंग है मेरा, दुबली-पतली लम्बी देह है, कड़ी भुजाएँ हैं, तेज मेरी गति है, सुना है दृष्टि मेरी तीक्ष्ण है, नाक ठोढी ललाट आदिको मिलाकर सुस्पष्ट सबल चेहरा है मेरा। विलायतके एक कलाकारने मेरी पत्थरकी मूर्ति गढ़नी चाही थी किन्तु मैं समय न दे सका। बंगालियोंको मैं 'माके लला' ही समझता हूं, और माताएँ भी अपने गोदके धनको मोमकी पुतलीके रूपमें ही देखना पसन्द करती हैं। ये-सब बातें मेरे मनमें उथलपुथल मचाकर मुझे गुस्सा दिला रही थीं। अपनी कल्पनामें पहलेसे ही मैंने झगड़ा करना शुरू कर दिया था अचिराके साथ। उससे कह रहा था, 'तुम जिसे कहती हो सुन्दर, वह विसर्जनका देवता है; तुम्हारी स्तुति जरूर मिलती है उसे, पर टिकता नहीं वह ज्यादा दिन।' कह रहा था, 'मैं बड़े-बड़े देशोंमें स्वयंवर-सभाकी वरमालाओंकी उपेक्षा कर आया हूं, और तुम मेरी उपेक्षा करोगी!' जबरदस्तीका यह बनावटी झगड़ा इतना लड़कपन था कि एक दिन हँस उठा था अपनी तुनक-मिजाजीपर। उधर विज्ञानीकी बुद्धि काम कर रही थी भीतर-ही-भीतर। अपने मनको समझाता, 'यह भी तो एक जबरदस्त बात है, मेरे जाने-आनेके रास्तेके किनारे वह बैठी क्यों रहती है?

एकान्त निर्जनता ही अगर उसे पसन्द है तो जगह बदल लेती।' पहले-पहल मैंने उसे कनखियोंसे देखा है, 'देखा ही नहीं' इस छलसे। इधर कभी-कभी स्पष्ट निगाहें मिली हैं; किन्तु जहाँ तक मैं समझता हूं, उसने उसे चार-आँखें होना नहीं समझा है।

इससे भी बढ़कर एक परीक्षा हो चुकी है। इसके पहले, दिनमें अपना पत्थर-मिट्टीका काम खतम करके शामके पहले उस पंचवटीके रास्तेसे मात्र एक बार मैं घर लौटता था। फिलहाल यातायातकी पुनरावृत्ति भी होने लगी है। और, यह घटना जियॉलॉजीसे कोई सम्बन्ध नहीं रखती – इतना समझने-लायक उमर हो गई है अचिराकी। मेरा भी साहस बढ़ चला जब देखा कि मेरा यह सुस्पष्ट भावका आभास भी उस तरुणीको स्थानच्युत नहीं कर सका। किसी-किसी दिन सहसा मैंने पीछेकी तरफ मुड़कर देखा है कि अचिरा मेरे तिरोगमनकी ओर देख रही है, और मेरी दृष्टि पड़ते ही उसने अपनी निगाह डायरीपर झुका ली है। सन्देह हुआ, शायद उसकी डायरी-लिखनेकी धारामें पहले जैसा वेग नहीं है। मेरी विज्ञानी बुद्धिमें मनोरहस्यकी आलोचना जाग उठी। मैं समझ गया कि उसने किसी-एक पुरुषके लिए तपस्याका व्रत लिया है, उसका नाम है भवतोष, और वह छपरामें ऐसिस्टैण्ट मैजिस्ट्रेटी कर रहा है विलायतसे लौटनेके बादसे। उसके पहले देशमें रहते-हुए इन दोनोंका प्रणय था गभीर, किन्तु कामपर लगते ही कोई-एक आकस्मिक विप्लव हो गया है। बात क्या है, पता लगाना चाहिए। कोई कठिनाई नहीं हुई, क्योंकि पटना विश्वविद्यालयमें मेरा एक केम्ब्रिजका साथी है बंकिम।

मैंने उसे चिट्ठी लिखी कि 'बिहार सिविल सर्विसमें कोई भवतोष मजुमदार है, उसके विषयमें कन्या-पक्षवालोंमें जनश्रुति सुनी है कि वह सत्पात्र है। मेरे एक मित्रने मुझसे अनुरोध किया है कि मैं उनकी कन्याके लिए उसे प्रजापतिके फन्देमें फँसानेमें उनकी सहायता करूं। रास्ता साफ है या नहीं, आद्यन्त संवाद लेकर मुझे लिखो। और उसकी मतिगति कैसी है, सो भी लिखना।'

जवाब आया—"रास्ता बन्द है। और उसकी मतिगतिके सम्बन्धमें अब भी अगर कुतूहल बाकी हो, तो सुनो।—

"कालेजमें पढ़ते समय मैं डाक्टर अनिलकुमार सरकारका छात्र था, ऐल्फाबेटके बहुतसे अक्षर उनके नामके पीछे लगे थे। जैसा उनमें असाधारण पाण्डित्य था वैसी ही बच्चों-जैसी सरलता। उनके घरका एकमात्र उजाला उनकी दोहतीको अगर देखो, तो मालूम होगा कि उसकी साधनापर प्रसन्न होकर सरस्वती केवल उसके बुद्धिलोकमें ही आविर्भूत नहीं हुई, अपना रूप भी ले आई हैं उसकी गोदमें। शैतान भवतोष घुस पड़ा उनके स्वर्गलोकमें। बुद्धि उसकी तीक्ष्ण है और बोलता है अनर्गल। पहले तो अध्यापक मुग्ध हुए, फिर मुग्ध हो गई उनकी दोहती। उनलोगोंकी असह्य अन्तरंगता देखकर हमलोगोंके हाथ सुरसुराने लगे। कुछ कहनेका उपाय नहीं था, सगाई पक्की हो चुकी थी, सिर्फ देर थी विलायत जाकर सिविल-सर्विसमें उत्तीर्ण हो आनेकी। उसकी विलायतकी पढाईका खर्च जुटाना पड़ा था अध्यापकको। भवतोपको सरदी बहुत मानती थी। हमलोगोंने सुबह-शाम दोनों वक्त भगवानसे प्रार्थना करना शुरू कर दिया कि वह न्युमोनियामें मर जाय। किन्तु मरा नहीं; पास कर गया। पास करनेके बाद ही भारत-सरकारके एक उच्च-पदस्थ मुरब्बीकी लडकीसे व्याह कर लिया। लज्जासे क्षोभसे अध्यापक अपना काम छोड़कर मर्माहत लडकीको लेकर कहाँ अन्तर्धान हो गये, कुछ पता नहीं छोड गये।"

चीठ्ठी पढ ली। और दृढ संकल्प कर लिया कि इस लड़कीका उद्धार करना ही है मर्मान्तिक लज्जासे, जीवनके शोचनीय अवसादसे।

इस बीचमें अचिराके साथ किसी तरह बात करनेके लिए भीतरसे मेरा जी फडफडाने लगा। यदि मैं विज्ञानी न होकर होता कहीं साहित्यरसिक, या पूर्ववंगीय न होकर होता पश्चिम-वंगीय आधुनिक, तो हरगिज मेरा मुँह इस तरह बन्द न रहता। किन्तु बंगाली लडकीसे डर लगता है, शायद पहचानता नहीं इसलिए। मेरी एक धारणा थी कि हिन्दू-नारी अपरिचित परपुरुष-मात्रके लिए बिलकुल ही अनधिगम्य है। खामखा अगर मैं बात करने जाऊं तो उसके रक्तमें लग जायगी अशुचिता। संस्कार ऐसा ही अन्धा होता है। यहाँ काममें लगनेके पहले कुछ दिन तो मैं कलकत्तेमें बिता ही आया था,—और नाते-रिश्तेदारोंके यहाँ देख आया था सिनेमा-मंच-पदचारिणी नारी-रंगमें

रंगीन आधुनिकाओंको, और जो बान्धवी-जातकी हैं उनके,—खैर जाने दो उनकी बात। किन्तु अचिराका कोई परिचय पाये बिना ही ऐसा मालूम हुआ कि इसकी जात ही अलग है,—आधुनिक कालके बाहर खड़ी है वह अपनी निर्मल आत्म-मर्यादामें, स्पर्शकातर लड़की है। मन-ही-मन बार-बार सोचता रहा, कैसे इससे बात शुरू की जाय।

इस बीचमें आसपास दो-एक डकैती हो गई थी। सोचा कि इसी विषयमें अचिरासे कहूं, 'राजासे कहकर आपके लिए पहरेका इन्तजाम करा दूं।' अंग्रेज लड़की होती, तो शायद इस बिन-चाही अनुकूलताको हिमाकत ही समझती; और गरदन टेढ़ी करके कहती, 'यह मेरे सोचनेकी बात है।' किन्तु बंगाली लड़की बातको किस रूपमें लेगी, इसका मुझे कोई तजुर्बा ही नहीं। लम्बे समयसे बंगालके बाहर रहते-रहते मेरे मनका अभ्यास बहुत-कुछ घुल-मिल गया है विलायती संस्कारके साथ।

दिनका उजाला करीब खतम होनेको है। अब अचिराका घर लौटनेका समय हो गया। या फिर उसके बाबा लेने आयेंगे। इतनेमें सहसा मैं क्या देख रहा हूं कि कोई बदमाश अचिराके हाथसे हैण्डबैग और डायरी छीनकर भागा जा रहा है। उसी क्षण मैं पेड़ोंकी ओटमेंसे निकलकर अचिरासे बोला, "डरिये मत आप।" और झपटकर उस बदमाशके कंधोंपर जा पड़ा। बैग और डायरी छोड़कर वह भाग खड़ा हुआ। मैंने लूटका माल ले जाकर अचिराको सम्हला दिया।

अचिरा बोली, "भाग्यसे आप—"

मैंने कहा, "मेरी बात न कहिये, मेरे ही भाग्यसे वह बदमाश आया था।"

"इसके मानी ?"

"इसके मानी यह कि उसीकी मददसे आपसे मेरी प्रथम वार्ता हो गई। इतने दिनोंसे किसी भी तरह मैं तय नहीं कर पा रहा था कि कैसे आपसे बातचीत शुरू करूं।"

"पर, वह तो डाकू था।"

"नहीं, डाकू नहीं, वह था मेरा बरकन्दाज।"

अचिरा अपनी कत्थई-रंगकी साड़ीका पल्ला मुँहसे लगाकर खिलखिलाकर हँस पड़ी। अहा, कैसी मीठी ध्वनि है! मानो निर्झरके स्रोतमें गोल-गोल ककड़ियोंका सुरीला गान हो।

हँसी रुकनेपर बोली, "पर सच होता तो बड़ा मजा होता।"

"मजा होता किसके लिए?"

"जिसे लेकर डकैती है उसके लिए। ऐसी एक कहानी पढ़ी है मैंने कहीं।"

"उसके बाद उद्धारकर्ताका क्या होता?"

"उसे घर ले जाकर चाय पिला दी जाती।"

"और इस नकली उद्धारकर्ताका क्या होगा?"

"उसे तो किसी चीजकी जरूरत नहीं। उसने तो सिर्फ बातचीत करनेकी पहली बात चाही थी, उसे मिल चुकी है दूसरी तीसरी चौथी पाँचवीं बात।"

"गणितकी संख्याएँ अकस्मात् निबट तो नहीं जायेंगी?"

"निबटेंगी क्यों?"

"अच्छा, आप होतीं तो मुझसे पहली बात क्या करतीं?"

"मैं होती तो कहती, वन-जंगलोंमें आप कंकड़-पत्थरोंसे क्यों खेला करते हैं, आपकी क्या उमर नहीं हुई है!"

"कहा क्यों नहीं?"

"डर लगता था।"

"डर? मुझसे डर?"

"आप जो बड़े-आदमी ठहरे। नानाजीसे सुन चुकी हूं मैं। उन्होंने आपके लेख विलायती अखबारोंमें पढ़े हैं। वे जो-कुछ पढ़ते हैं उसे मुझे भी समझानेकी कोशिश करते हैं।"

"मेरा लेख भी समझाया था क्या?"

"हां, कोशिश तो की थी। किन्तु उनमें लैटिन नामोंके पहरेका समारोह देखकर मैंने उनसे हाथ जोड़कर कहा था, नानाजी, इसे रहने दो, इससे तो बल्कि मैं तुम्हारी 'कोयण्टम थियोरी'की किताब ले आऊँ तो अच्छा।"

"उसे आप शायद समझ लेती हैं ?"

"जरा भी नहीं। किन्तु मेते नानामें ऐसा एक बद्ध सस्कार बैठा-हुआ है कि 'सभी सब-कुछ समझ सकते हैं', और उनकी उस धारणाको तोड़ना मुझे अच्छा नही लगता। उनकी और एक आश्चर्यकी धारणा है कि स्त्रियोंकी सहज-बुद्धि पुरुषोंसे बहुत ज्यादा तीक्ष्ण होती है। इसलिए अब डर लग रहा है कि 'टाइम-स्पेस' सम्बन्धी व्याख्या मुझे जरूर सुननी पड़ेगी। असल बात यह है कि लड़कियोंपर उनकी करुणाकी सीमा नहीं। नानी जब जिन्दा थीं तब कोई गम्भीर बात छेडते ही वे उनका मुंह बन्द कर देती थी। इससे स्त्रियोंकी तीक्ष्ण बुद्धि कहां तक पहुंच सकती है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण नानीसे उन्हे नहीं मिला। मैं उन्हें हताश नहीं कर सकती। बहुत सुना है, समझा नहीं है; और भी बहुत सुनूंगी और समझूंगी कुछ भी नहीं।"

अचिराकी दोनों आंखें कौतुक-स्नेहसे चमक उठीं। मेरा जी चाहने लगा कि यह बातचीत जल्दी खतम न हो तो अच्छा है। दिनका उजाला म्लान हो आया। सध्याके प्राथमिक तारे जल उठे हैं शाल-वनके माथेपर। सन्थाल स्त्रियाँ ईंधन संग्रह करके घर लौट रही हैं; दूरसे सुनाई दे रहा है उनके गीतका गुञ्जन।

इतनेमें बाहरसे आवाज आई, "अची, कहां हो तुम ? अँधेरा हो चला जो ! आजकल समय अच्छा नहीं है।"

"बिलकुल अच्छा नहीं, नानाजी ! इसीसे आज मैंने एक रक्षक नियुक्त किया है।"

अध्यापकजीके आते ही मैंने उन्हें प्रणाम किया पाँव छूकर। वे अत्यन्त चंचल हो उठे। मैंने परिचय दिया, "मेरा नाम है नीलमाधव सेनगुप्त।"

वृद्ध प्रोफेसरका चेहरा उज्ज्वल हो उठा, बोले, "अच्छा ! आप ही, हैं डाक्टर सेनगुप्त ? आप तो अभी लड़के ही हैं।"

मैंने कहा, "जी हां, बिलकुल लड़का हूं। मेरी उमर छत्तीससे ज्यादा नहीं।"

फिर अचिरा पहलेकी तरह कल-मधुर कण्ठसे हँस उठी, और उसने मेरे

मनमें दूने लयके झकारसे सितार बजा दिया। बोली, "मेरे नानाके आगे संसारके सभी लोग बच्चे हैं, और नानाजी हैं सब बच्चोंके अग्रवाल !"

अध्यापक बोले, "अग्रवाल ? यह नया शब्द कहांसे आविष्कार किया ?"

"था न तुम्हारा एक प्यारा छात्र कुन्दनलाल अग्रवाल। मुझे ला दिया करता था बोतलोंमें भर-भरकर आमकी चटनी। मैंने उससे पूछा था 'अग्रवाल' शब्दके मानी क्या हैं। उसने बताया था 'पायोनियर'।"

अध्यापकने कहा, "डाक्टर सेनगुप्त, आपसे परिचय तो हो ही गया, अब आपको हमारे यहां आना होगा।"

अचिरा बीच ही में बोल उठी, "कुछ कहनेकी जरूरत नहीं, नानाजी ! आनेके लिए ये फड़फड़ा रहे हैं। मुझसे ये सुन चुके हैं कि देश-कालके गमीर तत्त्वोंका गट्ठर लेकर उनकी तुम व्याख्या किया करते हो आइन्स्टाइनके कंधोंपर चढ़ाकर।"

मैं मन-ही-मन बोला, "हद है, यह कैसी शरारत !"

अध्यापक अत्यन्त उत्साहित होकर बोल उठे, "आप 'टाइम-स्पेस' के सम्बन्धमें—"

मैं घबड़ाकर बोला, "जी नहीं, मैं 'टाइम-स्पेस' के सम्बन्धमें कुछ नहीं जानता। मुझे समझायेंगे तो आपका समय व्यर्थ ही नष्ट होगा।"

अध्यापक व्यग्र होकर बोले, "समय ! समयकी यहां क्या कमी है। अच्छा, एक काम कीजिये न, आज हमारे ही यहां भोजन कीजियेगा, क्यों ठीक है न ?"

मैं उछलकर कहने-ही-वाला था, 'हां, हां।'

अचिरा बीच ही में बोल उठी, "नानाजी, तुम्हें क्या मैं यों ही कहती हूं बच्चे हो। तुम जब-है-तब लोगोंको निमंत्रण देकर मुझे परेशानीमें डाल देते हो। इस दण्डकारण्यमें 'फरपो'की दूकान कहांसे मिलेगी। ये लोग विलायतकी डिनर-खोर जातके सर्वग्रासी आदमी ठहरे ! क्यों तुम अपनी दोस्तीको बदनाम कराते हो। कमसे कम भेटकी-मछली और भेड़की व्यवस्था तो करनी ही पड़ेगी।"

"अच्छा अच्छा,—तो कब आपको सहूलियत होगी बताइये ?"

"सहूलियत मुझे कल ही हो सकती है। किन्तु अचिरा देवीको संकटमें नहीं डालना चाहता। घोर जंगल-पहाड़-गुफाओंमें मुझे घूमना पड़ता है। साथमें रखता हूं थैला भरकर चूड़ा, केले, टमाटर, चनेका कच्चा साग, और कभी-कभी मूंगफली भी। मैं अपने साथ ले आऊंगा फलाहारका सामान, अचिरा देवी अपने हाथसे दही-चूड़ा मिलाकर मुझे खिला देंगी। इसपर यदि राजी हों, तो कोई बात ही नहीं।"

"नहीं, नानाजी, विश्वास न करना इन-सबोंका। तुमने एक मासिकपत्रमें लेख लिखा था न, 'बंगालके खाद्यमें विटामिनका प्रभाव', उसे इन्होंने पढ़ा है, इसीसे तुम्हें सिर्फ खुश करनेके लिए चूड़ा-केलोंकी सूची सुना दी है।"

मैंने सोचा, अच्छी मुसीबतमें डाला। किसी भी मासिकपत्रमें डाक्टरका लिखा-हुआ विटामिन-तत्त्वका लेख पढ़ना मेरे लिए कभी भी सम्भव नहीं। लेकिन कबूल भी करूं कैसे ? खासकर जब कि वे प्रसन्न होकर मुझसे पूछ बैठे, "आपने उसे पढ़ा है क्या ?"

मैंने कहा, "पढ़ूं या न पढ़ूं, उससे कुछ नहीं, असल बात यह है कि—"

"असल बात यह है कि ये निश्चित जानते हैं, कल अगर इन्हें खिलाया जाय तो पशु-पक्षी स्थावर-जंगम कुछ भी बचेगा नहीं इनकी थालीमें पड़नेसे। इसीलिए इतनी निश्चिन्ताईसे टमाटरका नाम-कीर्तन कर रहे हैं। इनके शरीरकी तरफ देखो न जरा, 'सिर्फ शाकाहारसे बना' कोई कह सकता है ? नानाजी, तुम सभीपर बहुत ज्यादा विश्वास कर बैठते हो, यहां तक कि मुझपर भी। इसीलिए हँसीमें भी तुमसे कुछ कहनेकी हिम्मत नहीं पड़ती।"

बात करते-हुए धीरे-धीरे हमलोग उनके घरकी तरफ चले जा रहे थे, इतनेमें अचिरा सहसा बोल उठी, "अब आप जाइये अपने बंगलेमें।"

"क्यों, मैंने सोचा था कि आपलोगोंको घरके दरवाजे तक पहुंचा दूंगा।"

"घर अभी यों ही पड़ा हुआ है। फिर आप कहेंगे, बगाली स्त्रियोंको घर सँवारनेका सलीका ही नहीं। कल ऐसा सँवारके रखूंगी कि मेम-साहबकी याद आयेगी !"

अध्यापकने कहा, "आप कुछ खयाल न कीजियेगा, डाक्टर सेनगुप्त, अची बात ज्यादा कर रही है, पर इसका स्वभाव नहीं ऐसा। यहां अत्यन्त निर्जनता होनेसे ही यह भरा-भरा बनाये रखती है मेरे मनको, अनर्गल बातोंसे। यहीं ऐसा अभ्यास हो गया है। जब यह चुप रहती है तब घरमें सन्नाटा छा जाता है, और मेरे मनमें भी। इसे मालूम है यह बात। मुझे डर लगता रहता है कि कहीं कोई इसे गलत न समझ ले।"

वृद्धके गलेसे लिपटकर अचिरा कहने लगी, "समझने दो न, नानाजी! अत्यन्त अनिन्दनीया नहीं होना चाहती मैं, वह अत्यन्त अनइण्टरेस्टिंग हो जायगा।"

अध्यापक गर्वके साथ बोल उठे, "जानते हैं, सेनगुप्त, मेरी अची बात करना जानती है। ऐसी लड़की मैंने नहीं देखी कहीं।"

"तुमने ऐसी लड़की नहीं देखी, और मैंने ऐसे नाना भी नहीं देखे कहीं।"

मैंने कहा, "आचार्यदेव, आज विदा होनेके पहले आपको एक वचन देना होगा मुझे।"

"अच्छी बात है।"

"आप जितनी बार मुझे 'आप' कहते हैं, मन-ही-मन मुझे जीभ दबानी पड़ती है दांतों-तले। अगर आप मुझे 'तुम' कहें, तो वही मेरे लिए यथार्थ स्नेह और सम्मानका सूचक होगा। आपके घर मुझे तुम-श्रेणीमें ग्रहण करनेमें आपकी दोहती भी सहायता करेंगी।"

"हद हो गई! मैं मामूली दोहती ठहरी, सहसा इतना ऊंचा हाथ कैसे पहुंचेगा मेरा, आप बड़े आदमी ठहरे! मेरा कहना है, और-कुछ दिन जाने दीजिये। अगर भूल सकी आपके डिग्री-धारी रूपको, तो सब-कुछ सम्भव हो सकता है। पर नानाजीकी बात अलग है। अभी शुरू कर दो न, नानाजी, बोलो न, 'तुम कल यहां खाने आना, अची अगर मछलीके कोरमें नमक ज्यादा डाल दे, तो भले-आदमीकी तरह सहन कर लेना, और कहना, 'वाह, मजा तो खूब है, और भी जरा लेना पड़ेगा'।"

अध्यापकने स्नेहके साथ मेरे कंधेपर हाथ रखते हुए कहा, "भाई, और कुछ दिन पहले अगर हमारी अचीको देखते न, तो समझ जाते कि असलमें इसका कितना नाजुक स्वभाव है। इसीलिए, जब यह बात करना कर्तव्य समझती है तब उसपर जोर लगनेकी वजहसे बातें ज्यादा हो जाती हैं।"

"देख रहे हैं, डाक्टर सेनगुप्त, नानाजी मुझपर कैसा मधुर शासन करते हैं। मानो इक्षुदण्डसे। अनायास ही कह सकते थे कि 'तुम बड़ी मुखरा हो, तुम्हारी प्रगल्भता अत्यन्त असह्य है।' आप लेकिन मेरा डिफेण्ड किया कीजियेगा। क्या कहियेगा, कहिये न।"

"आपके मुँहके सामने नहीं कहूंगा।"

"ज्यादा कठोर होगा?"

"आप जानती हैं मेरे मनकी बात।"

"तो रहने दीजिये। अब घर जाइये।"

"एक बात बाकी है। कल आपलोगोंके यहाँ जो निमन्त्रण है सो मेरे नये नामकरणके लिए है। कलसे मेरे नाममेंसे 'डाक्टर' और 'सेनगुप्त' लुप्त हो जायगा। सूर्यके पास जाने-आनेसे धूमकेतुकी जैसे पूंछ उड़ जाती है।"

"तो नामकर्तन कहिये, नामकरण क्यों कहते हैं?"

"अच्छा, वही सही।"

यहीं समाप्त हो गया मेरा पहला बड़ा-दिन।

वार्धक्यका कैसा प्रशान्त सौन्दर्य है, कैसी सौम्य मूर्ति है। आंखें मानो आशीर्वाद बरसा रही हों। हाथमें एक पालिश की-हुई छड़ी है, कंधेपर सफेद चादर, धोती चुनी-हुई, और बदनपर है टसरका कुरता। माथेके बाल सब सफेद हो चुके हैं और बहुत कम रह जानेपर भी उनकी सँवार जरूर की जाती है। देखते ही स्पष्ट समझमें आ जाता है कि इनकी साज-सज्जामें दिन-रात दोहतीके निपुण हाथ चलते रहते हैं। और इन्हें जो अति-लालनका अत्याचार सहना पड़ता है सो केवल इस लड़कीको खुश रखनेके लिए ही।

मेरी वैज्ञानिक खोज अपनी मर्यादा छोड़कर करने लगी इनलोगोंकी खोज। अध्यापकका नाम रखता हूं मैं, अनिलकुमार सरकार। पिछली

पीढ़ीके केम्ब्रिज-युनिवर्सिटीके 'पी-एच० डी०'ओंमेंसे एक हैं। कई महीने पहले एक औपनागरिक कालेजकी अध्यक्षता त्यागकर यहाँ आये हैं, और स्टेटका एक परित्यक्त डाकबंगला किरायेपर लेकर अपने खर्चसे उसे रहने-योग्य बनाकर उसमें रहने लगे हैं। यह तो हुआ इतिहासका अधूरा खाका, बाकीका बंकिमकी चिट्ठीसे मिलाकर पूरा कर लिया जा सकता है।

मेरी कहानीका आदिपर्व समाप्त हो गया। छोटी-कहानीके आदि और अन्तमें ज्यादा व्यवधान नहीं रहता। चीजको बढ़ाकर बतानेका लोभ न करूँगा, उसके स्वभावको मैं नष्ट नहीं करना चाहता।

अचिराके साथ स्पष्ट बातचीत करनेका युग आ गया संक्षेपमें ही। उस दिन पिकनिक हुई थी तनिका-नदीके किनारे।

अध्यापक बालककी तरह अकस्मात् मुझसे पूछ बैठे, "नवीन, तुम्हारा ब्याह हो चुका?"

प्रश्न इतना अधिक सुस्पष्ट भावव्यंजक था कि और कोई होता तो उसे दबा जाता। मैंने जवाब दिया, "नहीं, अभी तक तो नहीं हुआ।"

कोई भी बात हो, अचिराकी निगाहसे बचकर नहीं निकल सकती। उसने कहा, "नानाजी, इनका 'अभी तक तो' शब्द-विन्यास संशयग्रस्त कन्यापक्षके मनको सान्त्वना देनेके लिए है। उसके कोई यथार्थ मानी नहीं हैं।"

"कभी कोई मानी ही नहीं, यह आपने निश्चित-रूपसे कैसे जान लिया?"

"यह गणितका प्रॉब्लेम है,—सो भी हाइयर मैथमेटिक्सका नहीं। पहले ही सुना जा चुका है कि आप छत्तीस सालके बालक हैं। हिसाब लगाकर देखा कि इस बीचमें आपकी माने कमसे कम पाँच-सात बार आपसे कहा है, 'बेटा, घरमें बहू लाना चाहती हूं।' आपने कहा है, 'उसके पहले मैं लोहेके सन्दूकमें रुपया लाना चाहता हूं।' मा आँखें पोंछकर चुप रह गई। इस बीचमें आपका और सब-कुछ तो हो गया, सिर्फ फाँसी थी बाकी। अन्तमें

यहांके राजं-दरबारमें जब मोटी तनखाका पद मिल गया तब माने फिर कहा, 'बेटा, अब तो ब्याह करना ही होगा, मैं अब कितने दिनकी मेहमान हूं।' आपने कहा, 'मेरा जीवन और मेरा सायन्स एक है, उसे मैं देशमाताको अर्पण करूंगा।' हताश होकर फिर वे आँखें पोंछकर बैठी हैं। आपकी छत्तीस सालकी उमरका गणित-फल निकालनेमें मेरी गणनामें गलती हुई है या नहीं, सच बताइयेगा !"

इस लड़कीके साथ असावधानीसे बात करना खतरनाक है। कुछ दिन पहले एक बार अचिरासे बात कर रहा था। प्रसंगवश अचिराने मुझसे कहा था, "हमारे देशमें स्त्रियोंको आपलोग पाते हैं घर-गृहस्थीकी संगिनीके रूपमें। गृहस्थीकी जिन्हें जरूरत नहीं उनके लिए इस देशकी स्त्रियाँ भी अनावश्यक हैं। किन्तु विलायतमें जो लोग विज्ञानके तपस्वी हैं, उन्हें तो अपने योग्य तपस्विनी मिल जाती हैं ; जैसे थीं अध्यापक कुरीकी सहधर्मिणी मैडम कुरी। वैसी कोई स्त्री आपको उस देशमें नहीं मिली ?"

याद आ गई कैथरिनकी बात। एकसाथ काम किया है हम दोनोंने लन्दनमें रहते-हुए। यहां तक कि मेरी एक रिसर्चकी पुस्तकमें मेरे नामके साथ उसका भी नाम जुड़ चुका था। माननी पड़ी मुझे अचिराकी बात।

अचिराने कहा, "उनसे आपने ब्याह क्यों नहीं कर लिया ? क्या वे राजी नहीं थीं ?"

फिर मानना पड़ा, "हाँ, प्रस्ताव तो उन्हींकी तरफसे उठा था।"

"तो ?"

"मेरा काम था भारतवर्षमें। और वह सिर्फ विज्ञानका ही हो सो बात नहीं।"

"अर्थात् प्रेमकी सफलता आप जैसे साधकोंके लिए कामनाकी वस्तु नहीं। स्त्रियोंके जीवनका चरम लक्ष्य होता है व्यक्तिगत, और आपलोगोंका है नैर्व्यक्तिक !"

इसका जवाब सहसा दिमागमें नहीं आया। मुझे चुप रहते देख अचिरा कहने लगी, "बंगला साहित्य शायद आप नहीं पढ़ते। 'कच और देवयानी'

नामकी एक कविता* है। उसमें यही बात है, स्त्रियोंका व्रत है पुरुषको बांधना और पुरुषोंका व्रत है उस बन्धनको काटकर परलोकका रास्ता बनाना। कच निकल पड़ा था देवयानीका अनुरोध न मानकर; और आप निकल आये हैं माका अनुनय न मानकर। एक ही बात है। स्त्री-पुरुषके इस चिरकालके द्वन्द्वमें आप जयी हुए हैं। जय हो आपके पौरुषकी! रोने दीजिये स्त्रियोंको, उस क्रन्दनका नैवेद्यके रूपमें भोग ग्रहण कीजिये अपनी पूजामें। देवताके लिए चढ़ता है नैवेद्य, किन्तु देवता रहते हैं निरासक्त।"

अध्यापकने इस बातचीतके मूल लक्ष्यको नहीं समझा। गर्वके साथ बोले, "अचीके मुँहसे गम्भीर सत्य बिना कोशिशके ऐसा सुन्दर ढंगसे प्रकट होता है कि बाहरके लोग सुनकर यही समझेंगे—"

उन्हें बराबर यही डर लगा रहता है कि बाहरके लोग उनकी नातिनीको गलत न समझ बैठें।

अचिराने कहा, "बाहरवालोंकी बात तुम मत सोचा करो, नानाजी, स्त्रियों की 'छोटे-मुंह बड़ी-बात' उनसे सही नहीं जाती, उनकी प्रवीणता उन्हें अखर जाती है। तुम मुझे सही समझो, बस इतना ही काफी है मेरे लिए।"

अचिरा बहुत बड़ी बात भी कह जाती है हँसी-हँसीमें, किन्तु आजकी उसकी गम्भीरता देखने-लायक थी। मैंने भी एक बातका अन्दाजा लगा लिया कि भवतोषने जरूर उसे समझाया होगा कि वह जो भारत-सरकारके उच्च गगनके ज्योतिर्लोकसे वधू लाया है, उसका भी लक्ष्य बहुत ऊंचा और निःस्वार्थ है। ब्रिटिश राष्ट्र-शासनके भण्डारसे ही वह शक्ति संग्रह कर सकेगा देशके काममें लगानेके लिए। किन्तु इतना आसान नहीं अचिराको धोखा देना। वह उसकी बातोंमें नहीं आई—इस बातका प्रमाण रह गया है उस ट्रिवलिन चिट्ठीके लिफाफेमें।

अचिराने फिर कहा, "देवयानीने कचको क्या अभिशाप दिया था, जानते हैं?"

---

* देखो 'रवीन्द्र-साहित्य' भाग ११ में प्रकाशित 'विदाई-अभिशाप'।

"नहीं ?"

"कहा था, 'तुम अपने ज्ञान-साधनाके फलको स्वयं नहीं भोग सकोगे, दूसरोंको दान कर देना पड़ेगा।' मुझे यह बात कुछ ऊटपुटांग ही जची। अगर ऐसा अभिशाप आज देता कोई युरोपको, तो वह जी जाता। विश्वकी चीजको अपनी चीजकी तरह काममें लानेसे ही वे लोभकी मार खाकर मर रहे हैं। सच है या नहीं, बताओ तो, नानाजी !"

"बिलकुल सच है। किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि तुमने यह बात सोची कैसे ?"

"अपने गुणसे कतई नहीं। ठीक ऐसी ही बात तुमसे सुन चुकी हूं कई बार। तुममें एक महान गुण है, भोलानाथ हो तुम, कब क्या कह जाते हो, सब भूल जाते हो। फिर चोरीके मालपर अपनी छाप लगाकर चलानेमें किसीको कोई डर ही नहीं रहता।"

मैंने कहा, "चोरी-विद्या बड़ी विद्या है। क्या विद्यामें और राष्ट्रमें, बड़े बड़े सम्राट बड़े-बड़े चोर हैं। असल बात यह है कि टुटपुँजिया चोर वे ही हैं जो छाप मारनेके पहले ही पकड़ जाते हैं।

अचिराने कहा, "इनके कितने ही छात्रोंने इनकी कही-हुई बातें नोट कर करके किताब लिखकर नाम कमा लिया है। बादमें ये खुद ही उनकी किताब पढ़कर प्रशसा करते हैं। जान ही नहीं पाते कि अपनी प्रशंसा अपने-आप ही कर रहे हैं। मेरे भाग्यसे ऐसी प्रशंसा मुझे अकसर मिला करती है। नानाजी, नवीन बाबूसे पूछ देखो न, पूछते ही ये कबूल कर लेंगे कि मेरी ऑरिजिनलिटीकी बात इन्होंने अपनी नोटबुकमें लिखना शुरू कर दिया है, जिसमें ये ताम्र-प्रस्तर-युगकी जरूरी बातें लिख रखते हैं। याद है, नानाजी, बहुत दिनोंकी बात है, तब तुम कालेजमें थे, तुमने मुझे 'कच और देवयानी' कविता सुनाई थी ? उस दिनसे मैं पुरुषके उच्च गौरवको मन-ही-मन मानती आई हूं, किन्तु कभी मुंहसे स्वीकार नहीं किया।"

"किन्तु, बेटी, अपनी किसी बातमें मैंने स्त्रियोंका गौरव नहीं घटाया।"

"तुम घटाओगे ! तुम तो स्त्रियोंके अन्ध भक्त हो. तुम्हारे मुँहसे स्तवगान

सुनकर मन-ही-मन हँसा करती हूं मैं। स्त्रियाँ निर्लज्ज होकर सब मान लिया करती हैं। सस्तेमें प्रशंसा हड़प जाना उनकी आदतमें शुमार है।"

उस दिन यह जो बातचीत हो गई, वह बिलकुल ही हास्यालाप हो सो बात नहीं। उसमें थी युद्धकी सूचना। अचिराके स्वभावकी दो दिशाएँ थीं, और उसके थे दो आश्रय, एक घरमें और दूसरा पंचवटीमें। अचिराके साथ जब मेरा काफी सहज-सम्बन्ध हो आया, तब मैंने स्थिर किया कि उस पचवटी के निभृत-एकान्तमें हास्य-कौतुकके बहाने अपने जीवनके सद्य-सकटकी बात मैं छेड़ूंगा और उसे अन्तिम निर्णयकी ओर ले जाऊंगा जैसे भी हो। किन्तु वहाँ रास्ता ही बन्द पाया। हमारे परिचयके प्रथम दिवसमें प्रथम वार्ता जैसे मेरी जबानपर नहीं आई, उसी तरह यहाँ जो अचिरा है उसके पास प्रथम वार्ता नहीं थी। मुकाबिलेमें उसके मनकी चरम बातपर पहुंचनेका कोई उपाय ढूंढे नहीं मिला। उसके घरके पास तो उसकी सहास्य-मुखरता रोक देती है मेरे तरफकी अग्रगतिको, मुझसे फिर एक कदम भी उठाते नहीं बनता ; और उसकी निर्जन-निभृत वनच्छायाने मेरे सम्पूर्ण चाञ्चल्यको रोक रखा है निर्वाक निःशब्दतासे। किसी-किसी दिन इनलोगोंके यहाँ चायकी निमन्त्रण-सभाके एक कोनेमें मन खोलनेका मौका मिलता है, और अचिरा समझती है कि मैं विपद्-मण्डलके आसपास आ रहा हूं, उस दिन भी उसके वाक्य-वर्षणकी अविरलता अस्वाभाविक-रूपसे बढ़ जाती है, जरा भी कहीं सँध नहीं मिलती, और आब-हवा भी हो उठती है प्रतिकूल। मेरा मन हो गया है अत्यन्त अशान्त ; और काममें बाधा ऐसी आ रही है कि मैं लज्जित होता रहता हूं भीतर-ही-भीतर। सदरमें होनेवाली बजटकी मीटिंगमें मेरे रिसर्च-विभागके लिए और भी कुछ रुपये मंजूर करा लेनेका प्रस्ताव उपस्थित है. उसकी भी समर्थक-रिपोर्ट आधेसे ज्यादा नहीं लिखी गई है। इस बीचमें फ्रेंचकी एस्थेटिक्सके सम्बन्धमें आलोचना कुछ दिनसे रोज सुनता आ रहा हूं। विषय सम्पूर्णतः मेरी उपलब्धि और उपभोगके बाहरका है,—अचिरा इस बातको निश्चिन्त-रूपसे जानती है। किन्तु अपने नानाको वह उत्साहित करती रहती है और मन-ही-मन हँसती रहती है। फिलहाल Behaviourism के

सम्बन्धमें जितनी भी विरुद्ध युक्तियाँ हैं उनकी व्याख्या चल रही है। इस तत्त्वालोचनाकी शोचनीयता यह है कि अचिरा उस समय छुट्टी लेकर चली जाती है बगीचेके कामसे, और कह जाती है, 'ये सब तर्क मैं पहले ही सुन चुकी हूं।' मैं भोंदूकी तरह बैठा रहता हूं, और बीच-बीचमें दरवाजेकी तरफ देखा करता हूं। सुविधाकी बात इतनी ही है कि अध्यापक कभी पूछते नहीं कि तत्त्वकी कोई दुरूह ग्रन्थि मेरी समझमें आ रही है या नहीं। वे समझते हैं कि सब-कुछ मैं स्पष्ट ही समझ रहा हूं।

किन्तु अब तो रहा नहीं जाता। कहीं कोई छिद्र पाते ही असल बात छेड़ ही देनी है। पिकनिकके किसी अवकाशमें अध्यापक जब खंडहर मन्दिरकी सीढ़ियोंपर बैठे नवीन-केमिस्ट्रीकी नई-प्रकाशित पुस्तक पढ़ रहे थे, तब नाटे आबलूसके पेड़के नीचे बैठी अचिरा सहसा मुझसे कह उठी, "इस चिरकालके वनमें जो एक अन्ध-प्राणकी शक्ति है, क्रमशः मैं उससे डरने लगी हूं।"

मैंने कहा, "आश्चर्य है, ठीक ऐसी ही बात उस दिन मैंने अपनी डायरीमें लिखी है।"

अचिरा कहती गई, "पुरानी इमारतकी किसी सँधमेंसे पीपलका अंकुर निकल आता है चुपके-चुपके, फिर अपनी जड़ोंसे वह इमारतको जकड़ लेता है, यह भी ठीक वैसा ही है। नानाजीके साथ इसी विषयको लेकर बात हो रही थी। उन्होंने कहा, 'लोकालयसे दूर बहुत दिन एकान्तमें रहनेसे मानव-चित्त प्रकृतिके प्रभावसे दुर्बल होता रहता है, और प्रबल हो उठता है आदिम प्राण-प्रकृतिका प्रभाव।' मैंने कहा, 'ऐसी हालतमें क्या करना चाहिए।' उन्होंने कहा, 'मनुष्यके चित्तको तो हम अपने साथ ले आ सकते हैं,—भीड़की अपेक्षा निर्जनतामें उसे हम अधिकतासे पा सकते हैं,—मेरी किताबोंको ही देखो।' नानाजीके लिए यह कहना आसान है, किन्तु सबके लिए तो एक ही दवा कारगर नहीं होती। आपकी क्या राय है?"

मैंने कहा, "अच्छा, बताता हूं। मेरी बातको आप ठीक तौरसे समझ देखियेगा। मेरा मत यह है कि ऐसी जगह किसी ऐसे आदमीका संग सम्पूर्णतः भीतर-बाहरसे मिलना चाहिए जिसका प्रभाव मानव-प्रकृतिको परिपूर्ण

बनाये रख सके। जब तक ऐसा नहीं होता तब तक अन्ध-शक्तिके आगे बराबर हार ही खानी पड़ेगी। आप अगर साधारण स्त्रियों जैसी होतीं, तो आपके आगे स्पष्टरूपसे सच बात कहनेमें अन्त तक संकोच बना ही रहता।"

अचिराने कहा, "कहिये आप, दुविधा न कीजिये।"

मैंने कहा, "मैं सायण्टिस्ट हूं, जो बात कहना चाहता हूं उसे इम्पर्सनल तौरपर ही कहूंगा। आपने किसी समय भवतोषसे बहुत ज्यादा प्रेम किया था। अब भी क्या आप उन्हें उतना ही चाहती हैं?"

"अच्छा, मान लीजिये, उतना ही चाहती हूं।"

"मैं ही आपके मनको हटा लाया हूं।"

"सो हो सकता है, किन्तु अकेले आप ही नहीं, मनकी भीतरकी भीषण अन्ध-शक्ति भी उसमें शामिल है। इसीलिए मैं इस 'हट-आने'को श्रद्धा नहीं करती, बल्कि स्वयं लज्जा पाती हूं।"

"क्यों नहीं करतीं श्रद्धा?"

"दीर्घकालके प्रयाससे मनुष्य अपने आदर्शको गढ़ता है, और प्राण-शक्तिकी अन्धताको तोड़ता है। आपकी तरफ मेरा जो प्रेम है वह उसी अन्ध-शक्तिके आक्रमणसे।"

"प्रेमका आप इस तरह तिरस्कार कर रही हैं नारी होकर?"

"नारी होनेसे ही कर रही हूं। प्रेमका आदर्श हमारे लिए पूजाकी वस्तु है। उसीका नाम है सतीत्व। सतीत्व एक आदर्श है। यह चीज अरण्य-प्रकृतिकी नहीं, मानवीकी है। इस निर्जनतामें इतने दिनोंसे उसी आदर्शकी मैं पूजा कर रही थी, समस्त आघात और सम्पूर्ण वंचनाके होते-हुए भी। उसकी रक्षा न कर सकी तो मेरी शुचिता जाती रहेगी।"

"आप श्रद्धा कर सकती हैं भवतोषपर?"

"नहीं।"

"उसके पास जा सकती हैं?"

"नहीं। किन्तु वह और मेरा उस जीवनका प्रेम एक वस्तु नहीं। अब मेरे लिए वह प्रेम इम्पर्सनल है। उसके लिए किसी आधारकी जरूरत नहीं।"

"ठीक समझ नहीं पा रहा हूं।"

"आप नहीं समझ सकेंगे। आपलोगोंकी सम्पदा है ज्ञानकी, – उच्चतम गिखरपर वह ज्ञान इम्पर्सनल है। स्त्रियोंकी सम्पदा है हृदयकी, उसका अगर सब-कुछ खो जाय, – जो-कुछ बाह्य है, देखनेमें आता है, छूनेमें आता है, भोग करनेमें आता है, – तो भी बाकी रह जाता है उसका प्रेमका वह आदर्श जो 'अवाङ्मनसोगोचरः' है। अर्थात् इम्पर्सनल।"

"देखिये, बहस करनेका समय अब नहीं रहा। यहांके अखबारमें आपने देखा होगा शायद, मेरा यहांका काम समाप्त हो गया है। असिण्टैण्ट जियॉलॉजिस्ट लिख रहे हैं, यहांसे और भी कुछ दूर खोजका काम शुरू करना होगा, किन्तु—"

"गये क्यों नहीं?"

"आपके मुँहसे—"

"मेरे मुंहसे अन्तिम बात सुनना चाहते हैं, पहली बात पहले ही वसूल कर चुके हैं शायद?"

"हां, यही बात है।"

"तो बात साफ-साफ ही कह दूं। अपनी उस पंचवटीमें बैठकर आपके अगोचरमें कुछ समय तक आपको देखा है मैंने। दिन-भर परिश्रम किया है, कड़ी धूपकी परवाह नहीं की, – कोई जरूरत नहीं हुई आपको किसीके सगकी। एक-एक दिन ऐसा लगा है कि आप हताश हो गये हैं, जिसे पानेका निश्चय किया था उसे आप नहीं पा सके। किन्तु फिर भी उसके दूसरे दिनसे फिर अक्लान्त मनसे धूल-मिट्टी-पत्थर खोदे ही जा रहे हैं। बलिष्ठ देहको वाहन बनाकर आपका मन मानो जययात्रा कर रहा हो। ऐसा विज्ञानका तपस्वी मैंने और कभी भी नहीं देखा। दूरसे मैंने आपकी भक्ति की है।"

"और अब शायद—"

"जो कहती हूं सो सुनिये। मेरे साथ आपका परिचय ज्यों-ज्यों बढ़ता गया, त्यों-त्यों दुर्बल होने लगी आपकी साधना। नाना तुच्छ कारणोंसे काम में पड़ने लगी बाधा। तब डर लगने लगा अपनेसे, इस नारीसे। छि छि,

कैसा पराजयका विष ले आई हूं अपनेमें! यह तो हुई आपकी तरफकी बात, अब अपनी बात कहती हूं। मेरी भी एक साधना थी, वह भी तपस्या है। मैं निश्चिन्त जानती थी कि वह मेरे जीवनको पवित्र करेगी, उज्ज्वल करेगी। देखा कि क्रमशः पिछड़ती ही जा रही हूं,–जो चांचल्य मुझे पा बैठा था उसकी प्रेरणा आई थी इसी छायाच्छन्न वनके निःश्वासमेंसे, वह आदिम प्राण-शक्ति की प्रेरणा है। किसी-किसी दिन यहांकी राक्षसी रात्रिके द्वारा आवेष्टित होकर ऐसा खयाल हुआ है कि ऐसी प्रवृत्ति-राक्षसी भी है जो मुझे किसी दिन अपने नानाके पाससे छीनकर ले जा सकती है। उसके बीस-बीस हाथ दिनपर दिन मेरी तरफ बढ़ते ही चले आ रहे हैं। उसी वक्त मैं बिस्तरसे उठकर दौड़ी-दौड़ी झरनामें जाकर स्नान कर आई हूं।"

इतना कहकर अचिराने आवाज दी, "नानाजी!" अध्यापक अपनी पढ़ाई छोड़कर उठ आये, और मधुर स्नेहके साथ बोले, "क्या है, बेटी?"

"तुम उस दिन कह रहे थे न, मनुष्यका सत्य उसकी तपस्याके भीतरसे अभिव्यक्त हो उठता है?–उसकी अभिव्यक्ति बायोलोजीकी नहीं है।"

"हां, मेरा तो यही मत है। संसारमें बर्बर मनुष्य जन्तुकी पर्यायमें है। एकमात्र तपस्यासे ही वह हुआ है ज्ञानी मनुष्य। और भी तपस्या सामने है, और भी स्थूलता मिटानी होगी, तब वह होगा देवता। पुराणोंमें देवताकी कल्पना है, किन्तु अतीतमें देवता नहीं थे; देवता हैं भविष्यमें, मनुष्यके इतिहासके अन्तिम अध्यायमें।"

"नानाजी, अब मैं अपनी और तुम्हारी बात खतम किये देती हूं। कई दिनोंसे मनमें उथलपुथल-सी मची हुई है।"

मैं उठ खड़ा हुआ, बोला, "अब मैं चल दिया।"

"नहीं, आप बैठिये। नानाजी, तुम्हारे उस कालेजमें जो अध्यक्ष-पद था वह फिर खाली हो गया है। सेक्रेटरीने तुम्हें अनुनयके साथ लिखा है फिर उस पदको ग्रहण करनेके लिए। तुम मुझे सभी चिट्ठियां दिखा देते हो, सिर्फ उसी चिट्ठीको नहीं दिखाया। इसीसे तुम्हारी दुरभिसन्धिपर सन्देह करके मैंने तुम्हारी वह चिट्ठी चुराकर देख ली है।"

"मेरी तरफसे अन्याय हुआ था।"

"कुछ भी अन्याय नहीं हुआ। मैं तुम्हें खींच लाई हूं तुम्हारे आसनसे नीचे। हमलोग सिर्फ उतारना ही जानती हैं।"

"क्या कह रही हो, बेटी!"

"सच ही कह रही हूं। विश्व-जगत् न हो, तो विधाताके हाथ बेकार हो जाते हैं,– छात्र न होनेसे तुम्हारी भी वैसी ही हालत हो गई है। सच है कि नही बताओ?"

"बराबर स्कूल-मास्टरी करता आया हूं न, इसीसे—"

"तुम और स्कूल-मास्टर! तुम born-teacher हो, तुम आचार्य हो। तुम्हारी ज्ञानकी साधना अपने लिए नहीं है, दूसरोंको दान करनेके लिए है। – देखा नहीं आपने, नवीन बाबू, माथेमें कोई आइडिया आते ही मेरे पीछे पड़ जाते हैं, बारह-आना समझमें नहीं आता, फिर भी, जरा भी दया-माया नहीं रहती। नहीं-तो फिर आपको लेकर बैठ जाते हैं, और वह और भी शोचनीय हो उठता है। आपका मन किधर है, कुछ समझते तो हैं नहीं, सोचते हैं विशुद्ध ज्ञानकी ओर है। नानाजी, छात्र तुम्हें चाहिए ही चाहिए। पर चुननेमें भूल न करना।"

अध्यापकने कहा, "छात्र ही तो शिक्षकको चुनता है, गरज तो उसीकी है।"

"अच्छा, ये-सब बातें पीछे होंगी। फिलहाल मुझे होश आ गया है, जो शिक्षक हैं उन्हें मैंने ग्रन्थकीट बना डाला है। मैंने तुम्हारी तपस्या भग कर दी है अपनी अन्धी गरजसे। अपना काम तुम्हें लेना ही होगा, अभी तुरत वापस जाना होगा तुम्हें अपने आसनपर।"

अध्यापक हतबुद्धि-से होकर अचिराके मुँहकी तरफ देखते रह गये। अचिरा बोली, "अच्छा, मैं समझ गई। तुम सोच रहे हो, मेरी क्या गति होगी। मेरी गति तुम हो। भोलानाथ, मुझे अगर तुम नहीं चाहते, तो नानी-दि-सेकेण्डकी तलाश करो, अपनी लाइब्रेरी बेचकर गहने बना देना उनके लिए, और मैं दूंगी लम्बी दौड़। अत्यन्त अहंकार न बढ़ गया हो तो यह बात तुम्हें माननी ही पड़ेगी कि मेरे बिना एक दिन भी तुम्हारा काम नहीं

चल सकता। मेरी अनुपस्थितिमें १५ आश्विनको तुम १५ अक्टोबर समझने लगते हो; और जिस दिन अपने किसी सहयोगी अध्यापकको निमन्त्रण देकर घर बुलाते हो उसी दिन लाइब्रेरी-रूमका दरवाजा बन्द करके कोई निदारुण इक्वेशन करने लग जाते हो। गाडीमें बैठकर ड्राइवरको ऐसा ठिकाना बताते हो कि आज तक जहां कोई मकान ही नहीं बना। नवीन बाबू समझते होंगे कि मैं अत्युक्ति कर रही हूं।"

मैंने कहा, "बिलकुल नहीं। कुछ दिनसे तो मैं भी देख रहा हूं, उसीसे असन्दिग्ध समझ गया हूं कि आप जो कह रही हैं सो सत्य है।"

अध्यापक बोले, "आज ऐसी अशकुनकी बातें तुम्हारे मुंहसे क्यों निकल रही हैं! जानते हो, नवीन, इस तरह ऊटपटांग बकनेका उपसर्ग इधर ही कुछ दिनोंसे दिखाई देने लगा है।"

"सब उपसर्ग अपने-आप शान्त हो जायेंगे, तुम चले तो चलो अपने कामपर। नार्टी फिर वापस आ जायगी, बिलकुल बन्द हो जायगी बायकी बकवास।"

अध्यापकने मेरी तरफ गौरसे देखते-हुए कहा, "तुम्हारी क्या राय है, नवीन?"

स्वयं विद्वान होनेसे ही उनकी जियोलॉजिस्टकी बुद्धिपर इतनी श्रद्धा है। मैं कुछ देर स्तब्ध रहकर बोला, "अचिरा देवीसे बढ़कर सच्ची सलाह आपको और कोई भी नहीं दे सकता।"

अचिरा उसी क्षण उठ खड़ी हुई, और पांव छूकर उसने मुझे प्रणाम किया। मैं संकुचित होकर पीछे हट गया।

अचिराने कहा, "संकोच न कीजिये, आपकी तुलनामें मैं कुछ भी नहीं हूं। यह बात किसी दिन स्पष्ट हो जायगी। आज यहीं अन्तिम विदा लेती हूं। जानेके पहले अब शायद भेंट नहीं होगी।"

अध्यापक आश्चर्यचकित होकर बोले, "यह कैसी बात, बेटी!"

"नानाजी, तुम बहुत-कुछ जानते हो, फिर भी बहुत विषयोंमें तुमसे मेरी बुद्धि बहुत ज्यादा है। विनयके साथ इस बातको स्वीकार कर लो।"

मैंने पदधूलि लेकर प्रणाम किया आचार्यको। उन्होंने मुझे छातीसे लगाकर कहा, "मैं जानता हूं सामने तुम्हारे कीर्तिका पथ प्रशस्त है।"

यहींपर मेरी यह छोटी-कहानी खतम होती है। इसके बादकी बात जियॉलॉजिस्टकी है।

घर जाकर मैं अपने कामके नोट्स् और रेकार्ड निकालकर देखने लगा। मनमें सहसा एक विशद आनन्द जाग उठा। मन-ही-मन बोला, इसीको कहते हैं मुक्ति। शामको दिनका काम पूरा करके बरडेमें जा बैठा। ऐसा लगा जैसे पिंजरेसे तो निकल आया है पक्षी, किन्तु पांवमें है जंजीरका एक टुकड़ा। हिलने-डुलनेमें वह जंजीर बज-बज उठती है।

अगहन १९९६]

'लैब्रोरेटरी'

१

नन्दकिशोर थे लन्दन-युनिवर्सिटीके पास-शुदा इञ्जिनियर। साधुभाषामें जिसे कहा जा सकता है देदीप्यमान छात्र, अर्थात् ब्रीलियन्ट, वही थे वे। स्कूलसे लेकर अन्त तक परीक्षाके प्रत्येक तोरणपर वे थे प्रथमश्रेणीके सवार।

उनकी बुद्धि थी विशद, और आवश्यकताएँ थीं उदार, किन्तु पूंजी थी तंग-मापकी।

रेलवे कम्पनीके बड़े-बड़े पुल बनानेके काममें उनका प्रवेश हो गया था। इस काममें आय-व्ययमें चढ़ाव-उतार खूब होता है, किन्तु दृष्टान्त साधु नहीं। इस काममें जब वे दाहना और बायाँ दोनों हाथ ही जोरोंसे चला रहे थे तब उनके मनमें कोई खटका नहीं था। इसमें सब कामोंका देन-लेन 'कम्पनी' नामक किसी-एक ऐब्स्ट्रैक्ट सत्ताके साथ सम्बन्धित होनेसे किसी व्यक्तिगत लाभ-नुकसानकी तहवील तक इसकी पीड़ा नहीं पहुंचती।

उनके अपने काममें मालिक लोग उन्हें 'जीनियस' कहते थे, त्रुटि-हीन हिसाब फैलानेमें उनका दिमाग अच्छा काम करता था। भारतीय होनेसे ही योग्य पारिश्रमिक उन्हें नहीं मिला। नीचे दरजेके विलायती कर्मचारी पेण्टकी भरी जेबोंमें हाथ डालकर पैर फैलाकर जब उन्हें 'हैल्लो मिस्टर मल्लिक' कहके सम्बोधित करते और पीठपर हथेली थपथपाकर अपना मालिकपन जाहिर करते तो उन्हें यह अच्छा नहीं लगता था। विशेषतः जब कि काम करनेके लिए थे वे, और, दाम और नाम पाने वक्त छूट जाते साहब लोग। इसका फल हुआ था यह कि अपने न्यायतः प्राप्य रुपयोंका एक प्राइवेट हिसाब उनके मनमें हमेशा चालू रहता था, और उसे वसूल करनेका ढंग भी उन्हें खूब अच्छा आता था।

पावने और गैर-पावने रुपयोंको लेकर नन्दकिशोरने कभी किसी दिन बाबूगीरी नहीं की। रहते थे सिकदरपाड़ा-गलीके एक डेढ़-मंजिले मकानमें। कारखानेके दाग-शुदा कपड़े बदलनेका समय नहीं था उनके पास। कोई मजाक उड़ाता तो कह देते, 'मजूर महाराजके तगमे-शुदा यही मेरी पोशाक है।'

किन्तु वैज्ञानिक संग्रह और परीक्षाके लिए विशेष-रूपसे मकान बनाया था उन्होंने बहुत बड़ा। इतने मशगूल थे अपने शौकमें कि लोगोंकी कानाफूसी उनके कान तक पहुंचती ही न थी, 'इतनी बड़ी आसमान-फोड़ इमारत! अलादीनका चिराग, अब तक यह था कहां!'

कोई शौक जब आदमीके सर हो लेता है तो उसके लिए वह शराबका नशा-सा हो जाता है, होश ही नहीं रहता कि लोग उसपर शक कर रहे हैं। असलमें नन्दकिशोर आदमी कुछ अजीब ही थे, विज्ञानकी सनक सवार थी उनके सरपर। वैज्ञानिक यंत्रोंके सूचीपत्रोंके पन्ने उलटते-उलटते सहसा उनका सम्पूर्ण प्राण-मन कुरसीके हत्थोंको पकड़कर झकझोर डालता था। जर्मनी और अमेरिकासे वे ऐसे कीमती-कीमती यंत्र मंगाया करते जो भारतके बड़े-बड़े विश्वविद्यालयोंमें भी नहीं मिलते। इस विद्या-लोभीके मनमें यही तो थी वेदना। इस खाक देशमें ज्ञानके भोजमें उच्छिष्ट लेकर सस्ती पत्तलें परोसी जाती हैं। विलायतमें बड़े-बड़े यंत्र व्यवहारका जो मौका मिलता है, हमारे देशमें उनकी कोई व्यवस्था न होनेसे ही यहांके लड़कोंको पाठ्य-पुस्तकोंके सूखे पन्नोंमें सिर्फ निस्सार जूठन ही से पेट भरना पड़ता है। नन्दकिशोर सतर होकर बुलन्द आवाजमें कहा करते, 'शक्ति है हमारे दिमागमें, पर जेबमें ताकत नहीं।' 'लड़कोंके लिए विज्ञानकी बड़ी सड़क खोल देनी होगी काफी चौड़ी करके'—यही था उनका प्रण।

बहुमूल्य यन्त्र जितने ही संगृहीत होने लगे, उनके सहकर्मियोंका धर्मबोध उतना ही असह्य हो उठा। इस समय उन्हें संकटके मुंहसे बचाया बड़े साहबने। नन्दकिशोरकी दक्षतापर उनकी बहुत ही ज्यादा श्रद्धा थी। इसके सिवा रेल्वेके काममें मोटी-मोटी मुट्ठियोंसे अपसारण-दक्षताका दृष्टान्त भी उनके जाने-हुए थे।

नौकरी छोड़नी पड़ी। साहबकी मददसे रेल-कम्पनीका पुराना लोहा वगैरह सस्ते दाममें खरीदकर उन्होंने अपना निजी कारखाना खोल दिया। तब यूरोपका पहला महायुद्ध छिड़ चुका था, और बाजार था सरगरम। नन्दकिशोर अत्यन्त बुद्धिमान व्यवहार-कुशल और सुचतुर आदमी थे, उस गरमागरम बाजारमें उनके रोजगारमें नई-नई नाली-प्रणालियोंसे मुनाफेके रुपयोंकी बाढ़-सी आ गई।

इतनेमें एक-और शौक सवार हो गया।

नन्दकिशोर व्यवसायके कामसे कुछ दिन पहले पंजाब गये थे। वहां जुट गई उनकी एक संगिनी। सबेरे बरंडेमें बैठे चाय पी रहे थे, इतनेमें एक बीस सालकी लड़की अपना घाघरा हिलाती-हुई बिना किसी संकोचके उनके सामने आ खड़ी हुई। चमकती-हुई आंखें हैं, और ओठोंपर है मुसकराहट, मानो पैनाई-हुई छुरी हो। उसने नन्दकिशोरके बिलकुल पैरोंके पास आकर कहा, "बाबू साहब, मैं कई दिनोंसे दोनों वक्त यहां आकर तुम्हें देख रही हूं। मुझे ताज्जुब होता है।"

नन्दकिशोरने हँसते-हुए कहा, "क्यों, तुमलोगोंके यहां क्या 'चिड़ियाघर' नहीं है?'

उसने कहा, "चिड़ियाघरकी कोई जरूरत नहीं। जिन्हें भीतर रखना चाहिए, वे सब बाहर छूटे-हुए हैं। इसीसे मैं आदमीकी तलाशमें हूं।"

"मिला?"

नन्दकिशोरकी तरफ इशारा करके वह बोली, 'मिल तो गया।"

नन्दकिशोरने हँसते-हुए कहा, "क्या गुण देखा बताना जरा?"

उसने कहा, 'यहांके बड़े-बड़े सब सेठजी गलेमें सोनेकी जंजीर लटकाये, हाथमें हीरेकी अंगूठी डाले, तुम्हें घेरे फिर रहे थे, —सोचा था कि परदेसी हैं, बंगाली हैं, कारबार कुछ समझता नहीं। अच्छा शिकार हाथ लगा है। मगर देखा कि उनमेंसे एकके भी फन्देमें तुम न आये। उल्टे वे ही तुम्हारे जालमें आ फंसे! किन्तु वे अभी तक समझे नहीं, मैं समझ गई।"

नन्दकिशोर चौंक पड़े उसकी बात सुनकर। समझ गये कि है कोई चीज,—मामूली लड़की नहीं।

लड़कीने कहा, "मैं अपनी बात तुमसे कहती हूं, सुन रक्खो। हमारे मुहल्लेमें एक बड़े नामी ज्योतिषी हैं। उन्होंने मेरी जन्मपत्री देखकर कहा था, किसी दिन दुनियामें मेरा बड़ा नाम होगा! कहा था, मेरे जन्मस्थानमें शैतानकी दृष्टि है।"

नन्दकिशोरने कहा, "कहती क्या हो! शैतानकी दृष्टि?"

लड़कीने कहा, "आप तो जानते हैं, बाबू साहब, दुनियामें सबसे बड़ा नाम है शैतानका। लोग उसकी निन्दा चाहे जितनी करें, पर है वह बिलकुल खरा। हमारे बाबा बम-भोलानाथ नशेमें चूर रहते हैं। उनका काम ही नहीं संसार चलाना। देखो न, अंग्रेज-सरकारने शैतानीके जोरसे दुनिया जीत ली है, क्रिश्चियनिटीके जोरसे नहीं। किन्तु वे हैं खरे, इसीसे राज्यकी रक्षा कर सके हैं। जिस दिन वे इस उसूलके खिलाफ चलने लगेंगे, उसी दिन शैतान उनके कान ऐंठ देगा, बेचारे बेमौत मारे जायेंगे।"

नन्दकिशोर दंग रह गये।

लड़की कहने लगी, "बाबू, नाराज न होइयेगा। तुम्हारे अन्दर उस शैतानका मन्तर है। इसीसे तुम्हारी होगी जीत। बहुतसे पुरुषोंको मैं बहका चुकी हूं, किन्तु मेरे ऊपर भी बाजी मारनेवाला मैंने तुम्हींको देखा। मुझे तुम मत छोड़ना, बाबू, नहीं तो नुकसानमें रहोगे।"

नन्दकिशोर मुसकरा दिये, बोले, "क्या करना होगा?"

"कर्जके मारे मेरी नानीका घर-द्वार सब बिका जा रहा है, तुम्हें उसका कर्ज चुका देना पड़ेगा।"

"कितना रुपया देना है?"

"सात हजार।"

नन्दकिशोर चौंक पड़े उसके दावेकी हिम्मत देखकर। बोले, "अच्छा, मैं दे दूंगा रुपया,—किन्तु उसके बाद?"

"उसके बाद मैं तुम्हारा संग कभी भी नहीं छोड़ूंगी।"

"क्या करोगी तुम ?"

"देखूँगी, कोई तुम्हें ठग न सके एक मेरे सिवा।"

नन्दकिशोर अबकी हँस पड़े, बोले, "अच्छी बात है, बात पक्की रही, यह लो, पहन लो मेरी अंगूठी।"

कसौटी है उनके मनमें, उसपर निशान पड़ गया एक कीमती धातुका। देख लिया उन्होंने, लड़कीके भीतर कैरेक्टरका तेज चमक रहा है; और समझ गये कि वह अपना मूल्य आप समझती है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। नन्दकिशोरने अनायास ही कह दिया था, 'दे दूंगा रुपया'; और दे दिये सात हजार रुपये।

उस लड़कीको वहाँ सब सोहिनी कहा करते थे। अच्छी सुडौल गठीली देह है और सुन्दर चेहरा। किन्तु चेहरेपर मन डिग जाय—नन्दकिशोर उस जातके आदमी ही न थे। यौवनकी हाटमें मनको लेकर जुआ खेलनेका उनके पास समय ही न था।

नन्दकिशोर सोहिनीको जिस दशामेंसे लाये थे वह बहुत ज्यादा निर्मल नहीं थी, और न निजन-निभृत ही थी। नन्दकिशोर ऐसे एकरुखे आदमी थे कि सांसारिक प्रयोजन या प्रथागत आचार-विचारकी परवाह ही नहीं करते थे। उनके मित्रोंमेंसे कोई-कोई पूछते, 'ब्याह कर लिया है क्या ?' जवाबमें वे सुनते, 'ब्याह बहुत ज्यादा मात्रामें नहीं, सहने-लायक ही हुआ है।' लोग हँस देते जब देखते कि वे स्त्रीको अपनी विद्याके ढाँचेमें ढालनेके लिए कमर कसके जुट पड़े हैं। और पूछते, "श्रीमतीजी प्रोफेसरी करने जायेंगी क्या कहीं ?" नन्दकिशोर जवाब देते, "नहीं, उसे 'नन्दकिशोरी' बनाना है, हरएक स्त्रीसे यह नहीं हो सकता।" कहते, "मैं असवर्ण-विवाह पसन्द नहीं करता।"

"सो कैसे ?"

"पति तो हो इञ्जिनियर, और पत्नी हो रसोईदारिन,—यह धर्मशास्त्रमें निषिद्ध है। घर-घर देखा जाता है कि दो अलहदा जातका गठबन्धन हुआ है, मैं जात मिलाये दे रहा हूं। प्रसन्नता भी चाहते हो तो, पहले मनका मेल कराओ।"

२

नन्दकिशोरकी मृत्यु हो गई प्रौढ़-अवस्थामें, किसी-एक दुःसाहसिक वैज्ञानिक परीक्षाके अपघातमें।

सोहिनीने सब कारोबार बन्द कर दिया। विधवा स्त्रीको ठगनेके लिए कारबारी लोग आ टूटे चारों तरफसे। और मुकदमोंका जाल बिछा दिया उनलोगोंने जिनका नाममात्रको भी रिश्ता था नन्दकिशोरसे। सोहिनी खुद कानूनके सब पेच समझ लेने लगी। उसपर फैला दिया नारीका मोह-जाल ठीक जगह देखकर वकीलोंके मुहल्लेमें। इसमें उसकी असंकोच-निपुणता थी, संस्कार माननेकी कोई बला ही न थी। एक-एक करके सभी मामलोंमें जीत हुई उसकी, दूरके रिश्तेका देवर गया जेल, दस्तावेज जाल करनेके अपराधमें।

सोहिनीके एक लड़की है, उसका नामकरण हुआ था 'नीलिमा'। लड़कीने स्वयं उसका परिवर्तन करके कर लिया है 'नीला'। कोई यह न समझ ले कि मा-बापने लड़कीका रंग काला देखकर एक मुलायम नामके नीचे उस निन्दाको दबा दिया हो। लड़की बहुत ही गोरी है। मा कहा करती है, उसके पुरखे काश्मीरसे आये थे। लड़कीकी देहमें फूट उठी है काश्मीरी श्वेतकमलकी आभा, आँखोंमें है नील-कमलका आभास, और बालोंमें चमक है पिङ्गलवर्णकी।

लड़कीके ब्याहके प्रसंगमें कुल-शील और जाति-गोत्रकी बातपर विचार करनेका रास्ता नहीं था। एकमात्र रास्ता था मन-मोहित-होनेका, और शास्त्रको लाँघ गया उसका जादू। कम-उमरका मारवाड़ीका लड़का था एक, बाप काफी पैसा छोड़ गये थे, और शिक्षा थी उसकी इस जमानेकी। अकस्मात् वह आ पड़ा अनङ्गके अदृश्य फन्देमें। नीला एक दिन गाड़ीकी प्रतीक्षामें स्कूलके दरवाजेके पास खड़ी थी। इतनेमें लड़केने उसे देख लिया। उसके बादसे और भी कुछ दिन तक वह उस रास्तेपर वायु-सेवन करता रहा। स्वाभाविक स्त्री-बुद्धिकी प्रेरणासे लड़की गाड़ी आनेके बहुत पहलेसे ही गेटके पास आकर खड़ी हो जाती। सिर्फ वही एक मारवाड़ी लड़का नहीं, और भी दो-चार

सम्प्रदायके युवक वहाँ अकारण चहलकदमी किया करते। उनमेंसे वही एक लड़का कूद पड़ा आँख मीचकर उसके जालमें। फिर निकला नहीं। सिविल-मतानुसार व्याह कर लिया उसने समाजके उस पार। किन्तु मियाद ज्यादा दिनकी नहीं मिली। उसके मायदसे वधू आई पहले, उसके बाद दाम्पत्यके बीचमें लकीर खींच दी मोनीम्तराने, उसके बाद मुक्ति।

फिर भरे-ज्वुरेका पंचमेल उपद्रव चलने लगा। माको दिखाई देने लगी लड़कीकी तड़पन। और याद उठ आई अपने यौवन-कालकी ज्वालामुखीकी चचलना। माका मन उद्विग्न हो उठा। अत्यन्त निविरतासे उच्च-शिक्षाकी चहारदीवारी खड़ी कर दी। पुरुष शिक्षक नहीं रखा। एक विदुषीको लगा दिया उसके शिक्षण-कार्यमें। नीलाके मनमें भी यौवनकी आँच लगती रहती, और वह उसे गरम कर देती अनिर्देश्य कामनाकी उत्तप्त वाष्पसे। युवकोंका झुंड इधर-उधर भीड़ लगाये रहता। किन्तु दरवाजा था बन्द। मैत्री-प्रयासिनियाँ निमन्त्रण दिया करतीं चाय टेनिस और सिनेमाके लिए, पर निमन्त्रण पहुँचता ही नहीं ठीक ठिकानेपर। बहुतसे लोभी फिरने लगे मधु-गन्धपूर्ण आकाशमें, किन्तु किसी भी अभागे कंगालको मोहिनीका छूट-पत्र नहीं मिलता। इधर देखा जाता कि उत्कठित कन्या मौका पाते ही उचकना-झाँकना चाहती है अस्थानमें। ऐसी किताबें पढ़ती है जो टेक्स्टबुक-कमेटीसे अनुमोदित नहीं हैं, लुके-छुपे ऐसी-ऐसी तसवीरें मँगा लेती है जो आर्ट-शिक्षाके लिए अनुकूल नहीं। विदुषी शिक्षयित्री तकको उसने अन्यमनस्क कर दिया। एक दिन जायोसिशनसे घर लौटते समय रास्तेमें रूखे-बिखरे बालवाले, जिनके मूछोंकी जगह रेख ही भीजी है अभी, एक सुन्दर लड़केने उसकी गाड़ीमें चिट्ठी डाल दी थी। उसके मनमें उस दिन कँपकँपी आ गई थी। चिट्ठी उसने छिपा रखी थी अपनी कुरतीमें। पकड़ी गई माके हाथ। दिन-भर कमरेमें बन्द रही बिना खाये-पीये।

सोहिनीके पतिने जिन लड़कोंको छात्रवृत्ति दी थी, उन सब अच्छे-अच्छे विद्यार्थियोंमें सोहिनीने वरकी तलाश की है। किन्तु प्रायः सभी कनखियोंसे उसके धनकी ओर देखते हैं। एक तो अपनी 'पोलिस' ही उसके नामपर

समर्पण कर बैठा। सोहिनीने कहा, "हाय री तकदीर, कैसा शर्मिन्दा किया है तुमने मुझे! तुम्हारी पोस्टग्रैजुएटी मियाद खतम होनेको है—सुना है, और तुम माला-चन्दन चढ़ा रहे हो गलत ठिकानेपर। हिसाबसे भक्ति बिना किये उन्नति जो नहीं होगी!" कुछ दिनोंसे एक लड़केकी तरफ सोहिनीका खास ध्यान जा रहा है। लड़का अच्छा है, पसन्दके काबिल। नाम है रेवती भट्टाचार्य। अभीसे वह सायन्सकी डाक्टर पदवीपर चढ़ा बैठा है। उसके दो-एक लेखोंकी जांच हो चुकी है विदेशोंमें।

२

लोगोंसे मिलने-जुलनेकी कला सोहिनीको खूब आती है। मन्मथ चौधरी रेवतीके शुरू-शुरूके अध्यापक हैं। उन्हें सोहिनीने वश कर लिया। कुछ दिन चायके साथ रोटी-टोस्ट, अमलेट और अंडेके बड़े खिलाकर बात छेड़ी। बोली, "आप शायद सोचते होंगे कि मैं आपको बार-बार चाय पीने क्यों बुलाया करती हूं।"

"मिसेस मल्लिक, मैं तुमसे निश्चयसे कह सकता हूं कि यह मेरी दुश्चिन्ता का विषय ही नहीं।"

सोहिनीने कहा, "लोग सोचते हैं कि हम मित्रता किया करती हैं स्वार्थकी गरजसे।"

"देखो, मिसेस मल्लिक, मेरा मत यह है कि गरज चाहे जिसकी भी हो, मित्रता स्वयं ही तो एक लाभ है। और यह भी कौनसी कम बात है कि मुझ जैसे अध्यापकसे भी किसीका स्वार्थ सध सकता है! असलमें, अध्यापक जातकी बुद्धि किताबोंके बाहरकी हवा न खा सकनेके कारण फीकी पड़ जाती है। मेरी बात सुनकर तुम्हें हँसी आ रही है मालूम होता है। देखो, यद्यपि मैं करता मास्टरी ही हूं। फिर भी, मजाक करना भी आता है मुझे। भविष्यमें चाय पीनेका निमन्त्रण देनेके पहले इतना जान रखना अच्छा है।"

"जान लिया, आफत चुकी। मैंने बहुतसे अध्यापक देखे हैं जिनके मुँहसे हँसी निकालनेके लिए डाक्टर बुलाना पड़ता है।"

"वाह वाह, मेरे ही दलकी मालूम होती हो तुम तो! तो अब असल बात छिड़ जाने दो।"

"आप शायद जानते होंगे, मेरे पतिके जीवनमें एकमात्र आनन्द था उनकी 'ल्बोरेटरी'। मेरे कोई लड़का नहीं,– उस ल्बोरेटरीमें बिठानेके लिए मैं एक लड़का ढूंढ रही हूं। सुना है रेवती भट्टाचार्य इस काबिल है।"

अध्यापकने कहा, "है तो काबिल लड़का, इसमें कोई सन्देह नहीं। किन्तु उसकी जिस लाइनकी विद्या है उसे शेष तक चालान करनेमें माल-मसाला कम नहीं लगेगा।"

सोहिनीने कहा, "मेरे रुपयोंके ढेरपर फफूंदी पड़ रही है। मेरी उमरकी विधवा स्त्रियां देवी-देवताओंके दलालोंको दलाली दे-देकर परलोकका दरवाजा चौड़ा करानेकी कोशिश करती हैं। आप शायद सुनके नाराज होंगे कि मेरा इन-सब बातोंपर जरा भी विश्वास नहीं।"

चौधरीकी आंखें फट गईं, बोले, "तो तुम क्या मानती हो?"

"मनुष्य-सा मनुष्य अगर कोई मिले, तो उसका सब पावना चुका देना चाहती हूं, जहां तक मेरा सामर्थ्य है। यही मेरा धर्म-कर्म है।"

चौधरी बोल उठे, "हुर्रे! शिला बहती है पानीमें! अब तो देख रहा हूं औरतोंमें भी कबसे कहीं-कहीं बुद्धिका प्रमाण मिलता है। मेरा एक बी० एस-सी० बेवकूफ छात्र है, अचानक उस दिन क्या देखता हूं कि गुरुके पांव छूकर वह कलाबाजी खेलने लगा है और मगजसे बुद्धि उड़ी जा रही है सेमलकी रूईकी तरह! तो, अपने घर ही में तुम उसे ल्बोरेटरीमें बिठा देना चाहती हो? जरा अलग कहीं हो तो नहीं चल सकता?"

"चौधरी महाशय, आप गलती न करिये। आखिर मैं हूं तो स्त्री ही। यहीं इस ल्बोरेटरीमें मेरे पतिने साधना की है। उनकी उस वेदीके नीचे किसी योग्य व्यक्तिको बत्ती जलाये रखनेके लिए अगर मैं बिठा सकी, तो जहां भी कहीं हों वे, उनका मन प्रसन्न रहेगा।"

चौधरीने कहा, "वाह जोन, अब नारीके गलेकी आवाज सुनाई दी! सुननेमें बुरी नहीं लगी। एक बात समझ रखना, रेवतीको अगर अन्त तक

पूरी सहायता करना चाहती हो तो लाख रुपयेकी भी सीमा पार करनी होगी।"

"करनेके वाद भी मेरे पास किनकी-भुसी कुछ-न-कुछ रह जायगी।"

"किन्तु परलोकमें जिन्हें प्रसन्न करना चाहती हो उनका मिजाज खराब तो नहीं हो जायगा? सुना है, परलोकके लोग चाहें तो सरपर सवार होकर उछल-कूद मचा सकते हैं।"

"आप अखवार तो पढ़ते ही होंगे। आदमीके मरते ही उसकी गुणावली अखवारोंके पैराग्राफमें लहरा उठती है। इसलिए मृत मनुष्यकी वदान्यतापर विश्वास करनेमें कोई दोष नहीं। रुपये जिस आदमीने इकट्ठे किये हैं, वहुतसे पाप भी जमा किये होंगे उसके साथ,—हमलोग आखिर हैं किस लिए अगर थैली झाड़कर पतिके पापको हलका न कर सकीं। जाने दो रुपया, मुझे रुपयोंकी जरूरत नहीं।"

अध्यापक उत्तेजित होकर बोल उठे, "अब मैं क्या कहूं तुमसे! खानसे सोना निकलता है, वह खालिस सोना है, यद्यपि उसमें मिला रहता है बहुत कुछ। तुम वही हो, छद्मवेशी सोनेकी डली। पहचान लिया मैंने तुमको। अब क्या करना है सो बताओ।"

"उस लडकेको राजी कर लीजिये।"

"कोशिश करूंगा, किन्तु काम आसान नहीं। और-कोई होता तो तुम्हारा दान उछलकर ले लेता।"

"खटका कहां है बताइये?"

"बचपनसे एक स्त्री-ग्रह उसकी जन्मपत्री दखल किये बैठा है। रास्ता रोक रखा है अटल अवुद्धिने।"

"कहते क्या हैं! पुरुष होकर—"

"देखो, मिसेस मल्लिक, नाराज किससे होगी! जानती हो मेट्रियार्कल समाज किसे कहते हैं? जिस समाजमें स्त्रियां ही हों पुरुषोंसे श्रेष्ठ। किसी समय द्राविड़ी समाजकी लहरें वगोपसागरमें खेला करती थीं।"

सोहिनीने कहा, "वे सुदिन तो वीत गये। भीतर-ही-भीतर लहरें खेल रही होंगी शायद, उलझा देती होंगी वुद्धिको, पर पतवार जो अकेले पुरुषके

ही हाथमें है। कानमें मंत्र फूंकते हैं वे ही, और जोरसे कनेठी भी लगाते हैं। कान उपड़नेकी नौबत आ जाती है।"

"अहा-हा, बात करना जानती हो तुम। सुनो, तुम जैसी नारियोंका युग अगर आये कभी, तो मेट्रियार्कल समाजमें मैं तो धोबीका हिसाब रक्खूं नारियोंकी साड़ी-कुरतियोंका, और कालेजके प्रिन्सपलको भेज दूं ढेंकी चलाने। मनोविज्ञान कहता है, बंगालमें मेट्रियार्की बाहर नहीं, है नाड़ीमें। 'मा' 'मा' की हम्बा-ध्वनि और-किसी देशके पुरुषोंसे सुनी है कहीं? यह तुम्हें बताये देता हूं, रेवतीको बुद्धिके छोरपर चढ़ी बैठी है एक जबरदस्त नारी!"

"किसीसे प्रेम करना है क्या?"

"ओह-हो, तब तो कोई बात ही नहीं थी। उसकी नसोंमें प्राण करते रहते हैं धुकधुक। युवतीके हाथ बुद्धि खोनेका बयाना लेकर तो आया ही है, यही तो उमर है उसकी। सो न होकर इस कच्ची उमरमें वह एक माला-जपकारिणीके हाथकी मालाका मणि बन गया है! उसे बचायेगा कौन? न यौवन बचा सकता है, न बुद्धि, न विज्ञान।"

"अच्छा, एक दिन उन्हें यहां चाय पीने बुलाया जा सकता है क्या? हम जैसे अपवित्रोंके घर खायेंगे-पीयेंगे तो?"

"अपवित्रोंके घर! नहीं खायेगा-पीयेगा तो पाटपर पछाड़-पछाड़कर उसे मैं ऐसा पवित्र कर दूंगा कि यमनाईका दाग भी न रहेगा कहीं उसकी अस्थिमज्जामें। एक बात पूछता हूं मैं तुमसे, शायद तुम्हारी एक सुन्दरी लड़की भी है न?"

"है। जले-भागकी है तो सुन्दरी ही। उसका क्या करना बताइये?"

"नहीं नहीं, मुझे गलत न समझ लेना। वैसे मैं सुन्दरी लड़की पसन्द करता हूं, इसे मेरी एक बीमारी ही समझना चाहिए। किन्तु उसके घरवाले अरसिक ठहरे, डर जायेंगे।"

"डरनेकी कोई बात ही नहीं,—मैंने अपनी ही जातिमें उसका ब्याह करना तय कर रखा है।"

यह महज एक बनावटी बात है।

चौधरीने कहा, "तुमने खुद तो विजातीय विवाह किया है ?"

"हैरान कम नहीं हुई। सम्पत्तिका दखल पानेके लिए मुकदमे लड़ने पड़े हैं बहुत। जिस तरह जीत पाई हूं,— कहनेकी बात नहीं।"

"सुन चुका हूं कुछ-कुछ। विरोधी-पक्षके आर्टिकेल्ड क्लर्कको लेकर तुम्हारे खिलाफ कुछ अफवाह फैल गई थी। मामला जीतकर तुम तो खिसक आईं, किन्तु वह बेचारा आत्महत्याकी तैयारी करते-करते बच गया किसी कदर।"

"इतने युगोंसे स्त्रियां टिकी-हुई हैं किस बूतेपर ? छल करनेमें कुछ कम कौशल कहीं लगता, लड़ाईके दाव-पेंचके समान ही है वह,— मगर हां, उसमें मधु भी कुछ खर्च करना पड़ता है। यह है नारीकी स्वभावदत्त युद्धनीति।"

"देखो तो, फिर मुझे गलत समझ रही हो। हम हैं विज्ञानी, न कि विचारक। स्वभावके खेलको हम निष्काम-रूपसे देखते चले जाते हैं। उस खेलमें जो फल होनेवाला होता है वही फलने लगता है। तुम्हारे तईं भी फल अच्छा ही फला था। मैंने कहा था, धन्य है तुम जैसी स्त्रीको। और यह भी सोचा था कि अच्छा हुआ जो मैं उस समय प्रोफेसर था, आर्टिकेल्ड क्लर्क नहीं था, नहीं तो मेरी भी शामत आये बिना न रहती। मर्करी सूरजसे जितना दूर है उतना ही वह बच गया समझो। यह गणितका हिसाब है,—इसमें न भला है, न बुरा। ये सब बातें समझना शायद तुम्हें आता होगा।"

"हां, सो तो आता है। ग्रह औरोंको खींचते-हुए भी चलते हैं और खुद खिचावसे बचकर भी निकलते हैं,—यह सीखने-योग्य तत्त्व तो है ही।"

"और भी एक बात कबूल कर रहा हूं। अभी-अभी तुम्हारे साथ बात करते-करते एक हिसाब मन-ही-मन लगा रहा था, वह भी गणितका हिसाब है। सोच देखो, उमर अगर दस साल भी कम होती, तो खामखा आज एक विपत्तिका सामना करना पड़ता। कोलिशन होते-होते बच गया समझ लो। फिर भी भापका तूफान आ रहा है हृदयमें। सोच देखो, सृष्टि आदिसे अन्त तक सिर्फ गणितका ही खेल है।"

इतना कहकर चौधरी अपने दोनों घुटनोंपर जोरसे थपकियाँ जमाते-हुए ठहाका मारकर हँस पड़े। एक बातका उन्हें होश ही नहीं था कि उनसे मिलनेके पहले सोहिनी दो घण्टे तक रंग-ढंगसे साज-शृङ्गार करके इन ढंगसे उमर बदल आई है कि सृष्टिकर्ता भी धोखा खा जायँ।

४

दूसरे दिन अध्यापक चौधरीने आकर देखा कि सोहिनी एक लोमशून्य मरियल घायल कुत्तेको नहलाकर तौलियासे उसकी देह पोंछ रही है।

चौधरीने पूछा, "इस मनहूस जानवरका इतना सम्मान क्यों?"

"इसे मरतेसे बचाया है इसलिए। मोटरके नीचे दबकर टाँग टूट गई थी, बैण्डेज बाँधनेसे अब कुछ-कुछ ठीक हो गई है। अब इसके जीवनमें मेरा भी शेयर है।

"रोज-रोज इस मनहूसका चेहरा देखनेसे मन नहीं खराब होगा?"

"चेहरा देखनेके लिए तो इसे रखा नहीं। मरते-मरते यह जो जी रहा है, यह देखना मुझे अच्छा लगता है। इस प्राणीके जीवनकी आवश्यकताओंको जब मैं रोजमर्रा मिटाती रहती हूं तब धर्म-कर्मके लिए बकरीके बच्चेके गलेमें रस्सी बाँधकर मुझे कालीघाट नहीं दौड़ना पड़ता। तुम्हारी बायोलॉजीकी लैबोरेटरीके लूले-लंगड़े अपाहिज कुत्ते-खरगोशोंके लिए मैंने एक अस्पताल खोलनेका निश्चित किया है।"

"मिसेज मल्लिक, तुम्हें जितना ही देख रहा हूं, मैं दंग रह जाता हूं।"

'और भी ज्यादा देखेंगे तो दह जाना रहेगा। आपने रेवती बाबूकी खबर देनेको कहा था न, उसे शुरू कर दीजिये।'

"मेरे साथ बुआके सम्पर्कसे उनलोगोंका सम्बन्ध है। इसीसे उनके घरकी खबर मालूम रहती है मुझे। रेवतीकी मा उसे जन्म देकर ही मर गई थी। शुरूसे ही वह बुआके हाथ पला है। उनकी बुआकी आचार-निष्ठा बिलकुल ठोस है। ऐसी हैं वे कि जरा-सी कोई त्रुटि-विच्युति होते ही दुनियाको सरपर उठा लेती हैं। उनके घरमें ऐसा कोई आदमी नहीं था जो उनके

डरता न हो। उनके हाथ पड़कर रेवतीका पौरुष बिलकुल सतुआ बन गया है। कालेजसे लौटनेमें कभी पाँच मिनटकी देर हो जाती है तो पच्चीस मिनट लगते हैं उसकी कैफियत देनेमें।"

सोहिनीने कहा, "मेरा तो खयाल है, पुरुष शासन करें और स्त्रियाँ करें लाड़-प्यार, तभी वजन ठीक रहता है।"

अध्यापकने कहा, "वजन ठीक रखके चलना मराल-गामिनियोंकी प्रकृतिमें ही नहीं है। वे इधर झुकेंगी या उधर झुकेंगी, झुकना उनका वस्तु-स्वभाव यानी धर्म है। कुछ खयाल न करना, श्रीमती मल्लिक, इस जातिमें दैवसे ही कोई ऐसी मिलती है जो माथेको रखती हो खड़ा और चलती हो सीधी चाल। जैसे—"

"खैर, अब कहनेकी जरूरत नहीं। पर मेरे भीतर भी जड़की तरफ 'स्त्री' यथेष्ट परिमाणमें है। देखते नहीं, कैसी झुकी जा रही हूं! यह लड़का फांसनेकी झोंक है! नहीं तो आपको परेशान करती क्या?"

"देखो, बार-बार इस बातको न दुहराया करो। समझ लो कि आज क्लासके लिए तैयार बगैर हुए ही चला आया हूं। कर्तव्यकी असावधानी आज इतनी अच्छी लग रही है!"

"शायद स्त्री-जातपर ही आपकी विशेष कुछ कृपा है।"

"जरा भी असम्भव नहीं। किन्तु उसमें कुछ तारतम्य जरूर है। खैर, यह बात पीछे होगी।"

सोहिनीने हँसते हुए कहा, "पीछे नहीं भी हो तो काम चल जायगा। फिलहाल जो बात छिड़ी है उसे खतम कर दीजिये। रेवती बाबूकी इतनी उन्नति हुई कैसे?"

"जितनी हो सकती थी उसकी तुलनामें कुछ भी नहीं हुई। एक कामसे किसी ऊँचे पहाड़पर जाना उसके लिए अत्यन्त आवश्यक हो गया था। उसने निश्चय भी कर लिया बदरिकाश्रम जानेका। मगर, देखो गजबकी बात! उसकी बुआकी भी एक बुआ थी, और वह मरी भी तो कहाँ जाकर, ठेठ बदरिकाश्रमके रास्तेमें! बुआने भतीजेसे साफ कह दिया, 'मैं

जब तक जीती हूं, तू पहाड़-जहाजपर कहीं भी नहीं जा सकता।' लिहाजा तबसे मैं सर्वान्तःकरणसे जो कामना कर रहा हूं उसे मुंह खोलकर नहीं कह सकता।"

"ठीक है, पर, इसमें सिर्फ बुआको ही दोष देनेसे कैसे काम चलेगा! बुआके दुलारे भतीजेकी अस्थि क्या कभी पकेगी ही नहीं?"

"सो तो मैं पहले ही बता चुका हूं। मेट्रियाकी नसोंमें हम्बाध्वनि जगा देती है, हतबुद्धि हो जाते हैं वत्सगण। अफसोसकी बात कहां तक कहूं! यह तो हुई नम्बर एक। इसके बाद रेवतीने जब सरकारसे वृत्ति लेकर केम्ब्रिज जानेका निश्चय किया तो फिर उमड़ पड़े बुआजीके हृदयाकाशमें आंसुओंके बादल गड़गड़ाहटके साथ। उनकी धारणा थी कि वह जा रहा है मेमसे ब्याह करने! मैंने कहा, 'कर ही लिया तो क्या है।' बस फिर क्या था! बात अनुमानकी ही थी, हो गई पक्की-पुख्ता। बुआने कहा, 'लड़का अगर विलायत गया, तो मैं गलेमें फांसी लगाके मर जाऊँगी।' किस देवताकी दुहाई देनेसे फांसीकी वह रस्सी तैयार होती, मैं नास्तिक होनेसे जानता न था; और न वह बाजारमें ही मिली। लिहाजा रह गया मन मारकर। रेवतीको मैंने खूब जरा डांट-फटकार दिया,—'स्टुपिड' कहा, 'डन्स' कहा, 'इम्बेसील' कहा। बस, वहीं मामला खतम। फिलहाल आप भारतीय कोल्हूसे बूंद-बूंद तेल निकालनेके काममें व्यस्त हैं।"

सोहिनी धीरज खो बैठी, बोली, "दीवारसे सिर दे मारनेको जी चाहता है। और कोई बात नहीं। एक स्त्रीने उसे रसातलमें पहुंचाया है तो दूसरी नारी उसे खींचकर निकालेगी मुक्त आकाशमें। यह मेरा प्रण रहा।"

"एक बात साफ कहता हूं सैजन! जानवरोंको सींग पकड़कर हटा देनेसे तुम्हारे हाथ पक्के हैं, पर पूंछ पकड़कर निकालनेमें अभी उतने दुरुस्त नहीं। हां, अबसे अभ्यास शुरू कर सकती हो। एक बात पूछता हूं, विज्ञानके इतना उत्साह तुममें आया कहांसे?"

"सभी तरहके विज्ञानमें मेरे पतिका मन रात-दिन इतना तल्लीन रहता है कि उसे लोग उन्माद ही कहते। उनका नशा ही था सर्वौ-कुल और

'लैबोरेटरी'। मुझे चुरुट पिला-पिलाकर लगभग वर्मी-औरत बना दिया था। पीछे छोड़ दी जब देखा कि पुरुषोंकी आँखोंको अखरती है। उन्होंने अपना एक और नशा मेरे ऊपर जमाया था। पुरुष स्त्रियोंको मुग्ध करते हैं बेवकूफ बनाकर, उन्होंने मुझे मुग्ध किया था अपनी विद्यासे। देखिये, चौधरीजी, पतिकी कमजोरियाँ स्त्रीसे छिपी नहीं रहतीं, किन्तु मैंने उनमें कहीं भी कोई खाद-खोट नहीं देखी। पाससे जब देखती थी तब देखा है कि वे बड़े हैं, और आज दूरसे देख रही हूं तो देखती हूं कि वे और भी बड़े हैं।"

चौधरीने पूछा, "सबसे बढ़कर बड़े वे कहाँ मालूम हुए?"

"बताऊँ? विद्वान होनेसे नहीं, किन्तु विद्यापर उनकी निष्काम भक्ति थी इसलिए। वे अपनी एक विशेष पूजाके प्रकाशमें, एक विशेष पूजाकी हवामें रहते थे। हम स्त्रियाँ तो देखने-छूनेकी वस्तु बगैर पाये पूजा करनेकी थाह ही नहीं पातीं। किन्तु उनकी 'लैबोरेटरी' आज मेरी पूजाका 'देवता' हो गई है। इच्छा होती है कि कभी-कभी वहाँ धूप जलाकर शंख-घण्टा बजाऊँ। सिर्फ डरती हूं अपने पतिकी घृणासे। उनकी जब दैनिक पूजा चालू थी तब इन सब यंत्र-तंत्रोंको घेरकर भीड़ लगाये रहते थे विद्यार्थीगण, शिक्षा लिया करते थे उनसे। मैं भी जम जाती थी।"

"लड़के क्या विज्ञानमें मन लगा सकते थे?"

"जो लगा सकते थे उनका चुनाव हो जाता था। ऐसे लड़के मैंने देखे हैं जो सचमुचके वैरागी थे। और ऐसा भी देखा है कि कोई-कोई नोट लेनेके छलसे बगलके पतेपर चिट्ठी लिखकर साहित्य-चर्चा भी किया करते थे।"

"कैसी लगती थी साहित्य-चर्चा?"

"सच बताऊँ? बुरी नहीं लगती थी। पति चले जाते थे कामसे, और भावुकोंका मन आसपासमें चक्कर काटा करता था।"

"कुछ खयाल न करना, मैं जरा साइकॉलॉजीकी भी स्टडी किया करता हूं : मेरी जिज्ञासा यह है कि उन्हें कुछ फल भी मिलता था क्या?"

"बतानेकी इच्छा नहीं होती, गन्दी हूं मैं। दो-चार जनोंसे जान-पहचान हुई थी, जिनकी याद आनेसे आज भी मनमें मरोड़ उठने लगती है।"

"दो-चार जनोंसे ?"

"मन जो लोभी ठहरा, वह मांस-मज्जाकी भूसके नीचे लोभकी आग दबाये रखता है, जरा-सा निमित्त-कारण पाते ही जल उठती है वह। मैंने तो शुरूमें ही नाम डुबो दिया था,—सच कहनेमें मुझे कोई दुविधा ही नहीं होती। आजन्म तपस्विनी नहीं होतीं हमलोग। तड़क-भड़क करते-करते प्राण निकले जा रहे हैं औरतोंके। द्रौपदी-कुन्तियोंको बनना पड़ता है सीता-सावित्री। एक बात कहती हूं, चौधरी साहब, याद रखियेगा, बचपनसे अच्छा-बुरा समझनेका ज्ञान मुझमें स्पष्ट नहीं था। किसी गुरुसे तो मुझे शिक्षा मिली नहीं थी। इससे बुराईमें मैं कूद पड़ी हूं आसानीसे, और पार भी हो गई हूं आसानीसे। देहपर दाग लगा है किन्तु मनमें कोई छाप नहीं लगी। कोई भी चीज मुझे पकड़के बांध नहीं सकी है। कुछ भी हो, उन्होंने जाते समय अपनी चिताकी आगसे मेरी आसक्तिमें आग लगा दी है, जमे-हुए पाप एक-एक करके जलके खाक होते जा रहे हैं। इसी लैबोरेटरीमें ही जल रही है वह होमाग्नि।"

"अहो, सच बात कहनेमें कैसा साहस है तुम्हारा!"

"सच बात कहला लेनेवाला आदमी मिले तो कहना सहज हो जाता है। आप जो अत्यन्त सहज हैं, बिलकुल सच्चे।"

"देखो, चिट्ठी-लिखाई जिन लड़कोंको तुम्हारा प्रसाद मिला था, वे क्या अब भी आते-जाते हैं?"

"ऐसा करके ही तो उनलोगोंने पोंछ दिया है मेरा मनका मैल। देखा कि उनलोगोंका लक्ष्य है मेरी चेकबुककी तरफ। सोचा होगा औरतोंका मोह तो मरनेवाला है नहीं, प्रेमकी सेंध मारकर सीधे पहुंच जायेंगे मेरे लोहेके सन्दूकके पास। इतना रस नहीं है मुझमें, उन्हें यह बात मालूम नहीं थी। मेरा ठहरा सूखा पंजाबी मन। मैं समाजके नियम-कानूनोंको तोड़ दे सकती हूं देहके खोतमें पड़कर, मगर बेईमानी हर्गिज नहीं कर सकती चाहे जान चली जाय। मेरी 'लैबोरेटरी'का एक पैसा भी वे नहीं निकाल सके। मेरे प्राण कठोर पत्थर बनकर दबाये बैठे हैं अपने देवताके कण्ठका हार। उनका

सामर्थ ही क्या कि वे उस पत्थरको गला सकें ! जिन्होंने मुझे चुनकर अपना लिया था उन्होंने गलती नहीं की ।"

"उन्हें मैं प्रणाम करता हूं । और वे लड़के अगर मिल जायें तो अच्छी तरह उनके कान ऐंठ दूं ।"

विदा लेनेके पहले अध्यापक एक बार लैबोरेटरीमें घूम आये सोहिनीके साथ ।

बोले, "यहीं स्त्री-बुद्धिकी चुआई हो गई है भबकेसे,—अपदेवताकी गाद पड़ी रह गई नीचे, और निकल आई खालिस स्पिरिट !"

सोहिनीने कहा, "कुछ भी कहिये, मनसे डर नहीं जाता । स्त्री-बुद्धि विधाताकी आदि-सृष्टि है । जब उमर कम होती है, मनमें जोर रहता है, तब वह छिपी रहती है किसी अँधेरे कोनेमें, और ज्योंही खून ठंडा होने लगता है त्योंही निकल आती है सनातनी बुआजी । उसके पहले ही मर जानेकी इच्छा रही मेरी ।"

अध्यापकने कहा, "डरनेकी कोई बात नहीं, मैं कहता हूं, तुम सज्ञानमें ही मरोगी ।"

५

सफेद साड़ी पहनकर और माथेके काले-सफेद बालोंमें पावडर लगाकर सोहिनी अपने चेहरेपर एक तरहका शुद्ध-सात्विक भाव ले आई । और, लड़कीको साथ लेकर मोटर-लच्चमें बैठकर पहुंच गई बुटनिकल-गार्डन । लड़की को पहनाई है नीलाभ धानी रंगकी बनारसी साड़ी, भीतरसे दिखाई देती है वसन्ती रंगकी चोली । माथेपर है कुंकुमकी बिन्दी, आँखोंमें है काजलकी बारीक एक रेखा, कंधेपर झूल रहा है जूड़ेका गुच्छा, और पैरोंमें हैं काले चमड़ेपर लाल-मखमलके कामवाले सैण्डल ।

जिस आकाश-नीमकी वीथिकाके नीचे रेवती रविवार बिताता है, पहलेसे सवाद लेकर सोहिनीने वहीं जाकर उसे पकड़ा । प्रणाम किया बिलकुल उसके पांवपर सिर रखकर । अत्यन्त चचल हो उठा रेवती ।

मोहिनीने कहा, "कुछ खयाल मत करना, बेटा, आखिर तुम ब्राह्मणके लड़के हो, मैं हूं छत्रीकी लड़की। चौधरीजीसे मेरे विषयमें सुना होगा।"

"सुना है। पर, यहां आपको बिठाऊं कहां?"

"है तो सही यह ताजा हरी घास, ऐसा आसन कहां मिलेगा! सोचते होगे शायद, यहां मैं क्यों आई? आई हूं अपना व्रत उद्यापन करने। तुम सरीखा ब्राह्मण तो ढूंढे नहीं मिलेगा।"

रेवतीने आश्चर्यके साथ कहा, "मुझ सरीखा ब्राह्मण!"

"और नहीं तो क्या! मेरे गुरुने कहा है, इस कालकी सबसे बढ़कर जो विद्या है उसमें जिनका दखल हो, वे ही ब्राह्मण हैं।"

रेवतीने लज्जित होकर कहा, "मेरे पिता करते थे यजमानी, मैं मन्त्र-तन्त्र कुछ भी नहीं जानता।"

"करते क्या हो! तुमने जो मन्त्र सीखा है उससे तो सारा संसार मनुष्यके वश हो गया है। तुम सोच रहे होगे, ये सब बातें तोंके मुंहसे कैसे निकल रही हैं? यह पुरुषकी ही देन है। दाता हैं स्वयं मेरे स्वामी। उनकी साधनाका जहां पीठस्थान था, वचन दो मुझे, वहां तुम्हें जाना ही होगा।"

"कल सवेरे मुझे छुट्टी है, जरूर आऊंगा मैं।"

"मैं देखती हूं, तुम्हें पेड़-पौधोंका भी शौक है। बड़ा आनन्द हुआ मुझे। पेड़-पौधोंकी खोजमें मेरे पति गये थे बर्मा, मैंने उनका साथ नहीं छोड़ा था।"

यह ठीक है कि साथ नहीं छोड़ा, किन्तु विज्ञानकी चर्चामें नहीं। अपने भीतरसे जो बात उठती थी, पतिके चरित्रमें भी उसका अनुमान बगैर किये उससे रहा नहीं जाता था। सन्देहका संस्कार था उसकी नस-नसमें। एक बार नन्दकिशोर जब सख्त बीमार पड़ गये थे, तब उन्होंने हँसीसे कहा था, "मरनेमें एकमात्र आराम यही है कि वहांसे तुम मुझे हटकर वापस नहीं ला सकतीं।"

मोहिनीने कहा था, "साथ तो जा सकती हूं।"

नन्दकिशोरने हँसके जवाब दिया, "तब तो बेमौत मरना होगा।"

सोहिनीने रेवतीसे कहा, "बर्मासे मैं एक पौधा लाई थी। बर्मी लोग उसे कहते हैं 'कोजाइटानियेङ्'। फूल उसके बहुत ही सुन्दर होते हैं। मगर यहाँ उसे बचा नहीं सकी।"

आज ही सवेरे सोहिनीने पतिकी लाइब्रेरीमें जाकर यह नाम पहले-पहल ढूंढ़ निकाला है। पौधा कभी आँखसे भी नहीं देखा उसने। विद्याका जाल फैलाकर विद्वानको खींचना चाहती है।

रेवती दंग रह गया सुनकर। उसने पूछा, "इसका लैटिन नाम क्या है जानती हैं आप?"

सोहिनीने अनायास ही कह दिया, "मिलेटिया कहते हैं।" और बोली, "मेरे पति, कोई भी बात हो, सहजमें स्वीकार नहीं करते थे, फिर भी उनमें एक अन्ध-विश्वास था कि 'फल-फूलोंमें प्रकृतिका जो कुछ है सुन्दर है। स्त्रियाँ विशेष अवस्थामें उनकी तरफ एकान्त-रूपसे यदि मन दें तो सन्तान अवश्य ही सुन्दर होगी।' इस बातको तुम मानते हो क्या?"

कहना व्यर्थ है कि यह मत नन्दकिशोरका नहीं है।

रेवतीने अपना सिर खुजलाते-हुए कहा, "यथोचित प्रमाण तो अभी तक नहीं मिले।"

सोहिनीने कहा, "कमसे कम एक प्रमाण मुझे मिला है, अपने ही घरमें। मेरी लड़कीने ऐसा आश्चर्यजनक रूप पाया कहाँसे! वसन्तके नाना फूलोंकी मानो ... खैर, मैं क्या कहूं, खुद अपनी आँखोंसे ही देख लेना।"

देखनेके लिए उत्सुक हो उठा रेवती। नाटकका कोई भी सरमजाम बाकी नहीं था।

सोहिनी अपने रसोइया-ब्राह्मणको सजा लाई है पुजारी-ब्राह्मणके वेशमें। वह पट्टवस्त्र पहने-हुए है, माथेपर तिलक है, चोटीमें बँधा-हुआ है फूल, और गलेमें है चमकता-हुआ सफेद जनेऊ।

सोहिनीने उसे अपने पास बुलाकर कहा, "महाराज, समय तो हो गया, अब नीलको बुला लाइये न!"

नीलाको वह स्टीम-रूममें ही बिठा आई थी। तय था कि बुलाये-जानेपर

वह टाली हाथमें लिये धीरे-धीरे चली आयेगी। और तब, कुछ देर तक उसे देखा जा सकेगा सवेरेकी धूप-छायामें।

इस बीचमें रेवतीको सोहिनी खूब अच्छी तरह देख लेने लगी। रंग चिकना-सांवला है जरा-सी पीली आभा लिये-हुए। ललाट चौड़ा है, और बाल उंगलियोंसे खिसका-खिसकाकर ऊपर कर लिये गये हैं। आंखें बड़ी नहीं किन्तु उनमें दृष्टिशक्तिका स्वच्छ प्रकाश चमचमा रहा है, सारे चेहरेमें उन्हींपर सबसे ज्यादा दृष्टि पड़ती है। मुंहका नीचेका घेरा स्त्रियों जैसा मालूम होता है मुलायम। रेवतीके सम्बन्धमें जितना तथ्य संग्रह किया है उसमें सोहिनीने विशेष लक्ष्य दिया है एक बातपर,—यह कि बचपनमें मित्रोंका उसपर था रोना-रूठना-मिश्रित सेण्टिमेण्टल प्रेम। उसके चेहरेपर जो एक तरहका दुर्बल माधुर्य था, वह पुरुष-बालकोंके मनमें मोह खींच ला सकता था।

सोहिनीके मनमें खटका हो गया। उसकी धारणा है कि लड़कियोंके मनको लंगड़की तरह मजबूतीसे पकड़ रखनेके लिए पुरुषको 'देखनेमें-अच्छा' लगनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं; और बुद्धि-विद्या भी गौण है। असल जरूरी चीज है पौरुषका मैग्नेटिज्म। वह उसकी स्नायुकी पेशियोंके भीतरकी बेतार-वार्ताके समान है, प्रकट होती रहती है कामनाकी अकथित स्पर्धाके रूपमें।

याद उठ आई उसे अपनी प्राथमिक अवस्थाकी रसोन्मत्तताके इतिहासकी। उसने जिसे खींचा था अथवा जिसने उसे खींचा था, उसके न तो था रूप, न विद्या थी और न वंशगौरव। किन्तु न-मालूम कौनसे एक अदृश्य तापका विकीरण था जिसके अलक्ष्य स्पर्शोंसे उसने सम्पूर्ण देह-मनसे उसका अत्यन्त रूपसे अनुभव किया था पुरुषके रूपमें। नीलाके जीवनमें कब किस समय ऐसा अनिवार्य आलोड़नका आरम्भ होगा—यह चिन्ता उसे स्थिर नहीं रहने देती। यौवनकी शेष-दशा ही सबसे ज्यादा विपत्तिकी दशा है, और अपनी उस अवस्थामें सोहिनी अपनेको बहुत-कुछ भूली-हुई थी निरवकाश ज्ञानकी चर्चामें। किन्तु देखते सोहिनीके मनकी जमीन थी स्वभावतः उर्वरा। पर जो ज्ञान नैर्व्यक्तिक है, सब लड़कियोंका उसपर सिंचाव नहीं होता। नीलाके मनमें प्रकाश पहुंचनेका कोई रास्ता ही न था।

नदीके घाटसे धीरे-धीरे आती दिखाई दी नीला। धूप पड रही है उसके माथेपर बालोंपर, और जरीकी रश्मियाँ झलमला रही हैं बनारसी साड़ीपर।

रेवतीकी दृष्टिने एक क्षणमें उसे व्याप्त-रूपसे देख लिया। और दूसरे ही क्षण उसने आँखें नीची कर लीं। बचपनेसे उसकी ऐसी ही शिक्षा है। जिस सुन्दरी तरुणीमें महामायाकी मनोहारिणी लीला चालू रहती, उसे ओटमें छिपाये रखती उसकी बुआकी तर्जनी। इसीसे, जब कभी मौका मिलता है तब दृष्टिका अमृत उसे जल्दीसे एक घूंटमें निगल जाना पड़ता है।

मन-ही-मन रेवतीको धिक्कारती-हुई सोहिनीने कहा, "देखो देखो, एक वार देखो तो सही!"

रेवती चौंककर निगाह उठाके देखने लगा नीलाको।

सोहिनीने कहा, "देखो तो, डॉक्टर-ऑव्-सायन्स, उसकी साड़ीके रंगके साथ पत्तोंके रंगका कैसा सुन्दर मेल बैठा है!"

रेवतीने संकोचके साथ कहा, "बहुत ही सुन्दर।"

सोहिनीने मन-ही-मन कहा, 'ऊँ-हुंक्, व्यर्थ है।' और बोली, "भीतरसे बसन्ती रंग झांक रहा है, और ऊपर है सब्ज-नीला रग। बताओ तो किस फूलसे इसका रंग मिलता है?"

उत्साह पाकर रेवतीने खूब अच्छी तरहसे देखा, और कहा, "एक फूलकी याद आती है, किन्तु उसका ऊपरका आवरण ठीक नीला नहीं, ब्राउन है।"

"कौनसा फूल बताना?"

रवतीने कहा, "भेलिना।"

"अच्छा, समझ गई। उसकी पांच पंखडियाँ होती हैं, एक चमकीली पीली और बाकीकी चार काली।"

रेवती आश्चर्यसे दंग रह गया। बोला, "फूलोंकी जानकारी इतनी आपको कैसे हुई?"

सोहिनीने हँसते-हुए कहा, "होना उचित नहीं हुआ, बेटा! पूजाकी डालीसे बाहरके फूल हमारे लिए पर-पुरुषके समान ही हैं।"

डाली हाथमें लिये धीरे-धीरे आ पहुंची नीला।

उसकी माने कहा, "सिकुड़ी-सी होकर खडी क्यों रह गई! पांव छूकर प्रणाम कर।"

"रहने दो, रहने दो।"—कहता-हुआ रेवती अस्थिर हो उठा। रेवती पाल्थी मारकर बैठा था, पांव ढूंढ निकालनेमें नीलाको इधर-उधर टटोलना पड़ा। सिहर उठा रेवतीका सारा शरीर।

नीलाकी डालीमें थीं दुर्लभ-जातिकी ऑर्किडकी मञ्जरियां, और चांदीकी थालीमें थीं बादामकी कतली, पिस्ताकी बरफी, 'चन्द्रपुली', मावेकी इमरती, मलाईके लड्डू, और बरफी-जैसे चौकोर टुकड़ोंमें कटा-हुआ 'भापा-दही'।

सोहिनीने कहा, "ये सब चीजें नीलाने अपने हाथसे बनाई हैं।"

बिलकुल झूठ बात है। इन सब कामोंमें नीलाका न तो कभी हाथ चला है, और न मन।

सोहिनीने कहा, "जरा-कुछ मुँहमें डालना होगा, बेटा, तुम्हारे ही लिए बनाई गई हैं ये चीजें।"

फरमाइश देकर बड़ेबाजारकी एक परिचित दूकानमें बनवाई गई हैं।

रेवतीने हाथ जोड़कर कहा, "इस समय खानेकी मेरी आदत नहीं। बल्कि आज्ञा दें तो घर ले जा सकता हूं।"

सोहिनीने कहा, "अच्छी बात है। अनुरोध करके खिलाना-पिलाना मेरे पतिके सिद्धान्तके विरुद्ध है। वे कहा करते थे, आदमी कोई अजगरकी जात थोड़े ही है!"

एक बड़े टिफिन-केरियरमें सोहिनीने सब चीजें सजाकर रख दीं। और नीलासे कहा, "दो तो, बेटी, डालीमें सब फूल सजा दो अच्छी तरह। एक जातके साथ दूसरी जातके फूल मिला मत देना। और, अपने जूड़ेमें जो रेशमी रूमाल लपेट रखा है, उससे ढक देना डालीको।"

विज्ञानीकी आंखोंमें रूप-पिपासुकी दृष्टि उत्सुक हो उठी। यह जो प्राकृत जगतके नाप-जोखके बाहरकी चीज ठहरी! नाना रंगोंके फूलोंमें नीलाकी सुन्दर सुडौल उंगलियां सजानेकी छन्दके साथ नाना भंगिमाओंमें चल

रही थीं, – रेवतीके लिए दृष्टि हटाना मुश्किल हो गया। सिर्फ बीच-बीचमें वह नीलाके मुँहकी तरफ देख लेता है। एक तरफ उसके चेहरेकी सीमामें था मोती-चुन्नी-पन्नाके जड़ाऊ हारमें लिपटा-हुआ जूड़ाका इन्द्रधनुष, और दूसरी ओरकी सीमामें थी वसन्ती रंगकी चोलीपर उभरी-हुई साडीकी रंगीन किनारी।

सोहिनी मिठाई सजा रही थी, – किन्तु उसका एक तृतीय नेत्र भी था, और सामने जो एक जादू चल रहा था उससे वह अनभिज्ञ नहीं थी।

अपने पतिके अनुभवके अनुसार सोहिनीकी धारण थी कि विद्या-साधनाका मेडसे-घिरा खेत हरएक जानवरके चरनेका खेत नहीं। आज सोहिनीको आभास मिला कि वह मेड़ सबके लिए समान अलंघ्य नहीं है, और यह उसे अच्छा नहीं लगा।

६

दूसरे दिन सोहिनीने अध्यापकको बुलवा भेजा। और कहा, "अपनी गरजसे मैं आपको बुलाकर झूठमूठको तकलीफ दिया करती हूं। और शायद कामका भी हर्जा कराती हूं।"

"दुहाई है तुम्हें, और भी जरा जल्दी-जल्दी बुलाया करो। जरूरत हो तो अच्छा ही है, न हो तो और भी अच्छा।"

"आपको मालूम है कि कीमती यंत्र संग्रह करनेके नशेमें मेरे पतिको और किसी बातका होश ही नहीं रहता था। मालिकोंको धोखा दे जाते थे अपने इस निष्काम लोभमें। सारे एशियामें ऐसी 'लैबोरेटरी' कहीं भी न मिले, यह जिद उनकी तरह मेरे सरपर भी सवार हो गई, और उस जिदने ही मुझे बचा रखा है; नहीं तो मेरा मादक खून सड़-सड़कर झाग उगलता रहता चारों तरफ। देखिये, चौधरीजी, आप मेरे ऐसे बन्धु हैं जिनसे मैं बिना किसी सकोचके अपने स्वभावमें-लिपटी गन्दगीको कह सकती हूं। अपने कलंककी दिशा दिखानेको खुला दरवाजा मिल जाता है तो मन साँस लेकर जी जाता है।"

चौधरीने कहा, "जो लोग सम्पूर्णताको देख सकते हैं उनके लिए सत्यको दबानेकी आवश्यकता नहीं होती। अर्ध-सत्य ही लज्जाकी वस्तु है। सम्पूर्ण देखनेकी ही प्रकृति है हमलोगोंकी, हमलोग विज्ञानी ठहरे।"

"वे कहा करते थे, 'मनुष्य प्राणोंकी बाजी लगाकर प्राण बचाना चाहता है, किन्तु प्राण तो बचते नहीं। इसीलिए, जीनेका शौक मिटानेके लिए वह ऐसी कोई चीज ढूंढता फिरता है जो प्राणोंसे भी बहुत ज्यादा हो।' वह दुर्लभ वस्तु उन्हें मिल गई थी अपनी इस लेबोरेटरीमें। इसे अगर मैं जीवित न रख सकी, तो उन्हें मैं चरम-रूपसे मारूंगी स्वामी-घातिनी होकर। मैं इसके लिए रक्षक चाहती हूं, इसीसे ढूंढ रही थी रेवतीको।'

"कोशिश की थी?"

"की थी, हाथों-हाथ फलकी आशा भी है, पर अन्त तक टिकेगा नहीं।"

"क्यों?"

"उसकी बुआ ज्यों ही सुनेंगी कि रेवतीको मैं खींच रही हूं अपने पास, त्यों ही वे उसे ले जानेके लिए दौड़ी आयेंगी। सोचेंगी, अपनी लड़की ब्याहनेके लिए मैं उसपर डोरे डाल रही हूं।"

"इसमें दोष क्या है। ऐसा हो जाय तो अच्छा ही हो। लेकिन, तुम तो कह रही थीं कि अन्य जातिमें नहीं ब्याहोगी।"

"तब तक मैंने आपका मन नहीं पहचाना था, इसलिए झूठ कह दिया था। मेरी तो बहुत इच्छा थी रेवतीको लड़की ब्याहनेकी किन्तु अब फिक्रमन्द नहीं है।"

"क्यों?"

"समझ गई मैं, लड़की मेरी तोड़फोड़-प्रकृतिकी है। जो-कुछ भी उसके हाथ पड़ेगा उसे वह साबूत नहीं रखनेकी।"

"मगर वह है तो तुम्हारी ही लड़की।"

"है तो मेरी ही लड़की, इसीसे तो मैं उसकी नस-नससे वाकिफ हूं।"

अध्यापकने कहा, "लेकिन इस बातको भी कैसे भुलाया जा सकता है कि नारी पुरुषमें इन्सपिरेशन जगा सकती है!"

"मुझे सब मालूम है। पुरुषकी खुराकमें आमिष तक तो चलाया जा सकता है, किन्तु शराब चलाते ही सत्यानाश है। मेरी लड़की शराबकी सुराही है, ऊपर तक भरी हुई!"

"तो क्या करना चाहती हो बताओ?"

"मैं अपनी लैबोरेटरी दे जाना चाहती हूं पब्लिकको।"

"अपनी एकमात्र कन्यासे बचाकर?"

"कन्याको? उसे दान करनेसे वह दान किस रसातलमें पहुंचेगा, मैं नहीं कह सकती। मैं अपनी ट्रस्ट-सम्पत्तिका प्रेसिडेण्ट बना दूंगी रेवतीको। इसमें तो बुआको कोई आपत्ति नहीं हो सकती?"

"स्त्रियोंकी आपत्तिकी युक्तिका ही अगर ज्ञान होता तो पुरुष होकर पैदा ही क्यों होता? लेकिन एक बात मेरी समझमें नहीं आ रही है,-उसे अगर जमाई ही नहीं करना है, तो प्रेसिडेण्ट क्यों करना चाहती हो!"

"केवल यन्त्रोंसे क्या होगा! आदमी भी तो चाहिए उनमें प्राण भरनेवाला। एक बात और है, मेरे पतिकी मृत्युके बाद आज तक एक भी नया यन्त्र नही मगाया गया है। रुपयोंकी कमीके कारण नहीं,-खरीदनेके लिए कोई लक्ष्य भी तो होना चाहिए सामने। मालूम हुआ है कि रेवती 'मैग्नेटिजम' सम्बन्धी खोज कर रहा है। मैं चाहती हूं उस मार्गमें संग्रहको आगे बढ़ने दिया जाय,- चाहे जितना भी रुपया लगे, लगने दो।"

"अब मैं क्या कहूं तुमसे! तुम अगर पुरुष होती तो मैं तुम्हें कंधेपर लेकर नाचता फिरता चारों तरफ। तुम्हारे पतिने रेल-कम्पनीका धन चुराया था, और तुमने चुरा लिया है उनके पुरुष-मनको। ऐसी अद्भुत कलमसे-जुड़ी बुद्धि मैंने और-कभी भी नहीं देखी। मेरी भी सलाह लेना तुम आवश्यक समझती हो, यही आश्चर्य है।"

'इसका कारण यह कि आप बिलकुल सच्चे आदमी हैं, ठीक बात कहना जानते हैं।"

"तुमने तो हँसा दिया मुझे। तुमसे बेठीक बात कहके खामखा मैं फंसता फिरूं, ऐसा ठोस मूर्ख मैं नहीं हूं। – तो फिर जुट जाना चाहिए

अब,– चीज-वस्तकी फेहरिस्त बनाना, दावोंकी जांच करना, अच्छे वकीलको बुलाकर तुम्हारे स्वत्वोंका विचार करना, नियम-कानून बनाना इत्यादि बहुतसे बखेड़े हैं।"

"इन-सब कामोंका जिम्मा आपपर ही रहेगा। मैं कुछ नहीं जानती।"

"सो तो होगा नाममात्रको। खूब अच्छी तरह ही जानती हो तुम कि जैसा तुम कहोगी वैसा ही मैं कहूंगा, जैसा तुम कराओगी वैसा ही मैं करूंगा। मेरे लिए भलाई बस इतनी ही है कि दोनों वक्त मुलाकात हुआ करेगी तुमसे। मैंने तुम्हें किन निगाहोंसे देखा है, सो तो तुम जानती नहीं!"

मोहिनी तड़ाकसे कुरसी छोड़कर उठ खड़ी हुई; और बड़ी फुरतीसे चौधरीके गलेसे लिपटकर चटसे उनका गाल चूमकर तुरत भले-मानसकी तरह अपनी कुरसीपर जाकर बैठ गई।

"लो, सर्वनाशका खेल शुरू हो गया मालूम होता है!"

"इस बातका डर अगर जरा भी होता न, तो आपके पास भी न फटकती मैं कभी।–इतना पुरस्कार तो आपको मिला करेगा कभी-कभी।"

"ठीक कहती हो?"

"हां, ठीक ही कहती हूं। मेरा इसमें कोई खर्च नहीं, और आपका भी ऐसा कुछ ज्यादा पावना हो, चेहरेके भावसे तो नहीं मालूम पड़ता।"

"अर्थात् तुम कहना चाहती हो कि यह सूखे-मरे काठपर कठफोड़ेका चोंच मारना है! चल दिया मैं वकीलके घर।"

"कल एक बार आयेंगे न, इस मुहल्लेमें?"

"क्यों, क्या करने?"

"रेवतीके मनमें चाभी भरने।"

"और अपना मन खोने?"

"मन क्या आपके अकेलेके ही है?"

"तुम्हारे मनका कुछ बाकी है क्या?"

"उच्छिष्ट थोड़ा पड़ा-हुआ है।"

"उसमें अभी तो काफी बन्दरोंको नचाया जा सकता है।"

७

रेवती उसके दूसरे दिन निर्दिष्ट समयके लगभग बीस मिनट पहले ही लैबोरेटरी देखने आ गया। सोहिनी तैयार नहीं थी, जल्दीमें रोजमर्राके मामूली कपड़े पहने ही उसे आना पड़ा रेवतीके सामने। रेवती समझ गया कि उससे गलती हुई है। बोला, "मेरी घड़ी ठीक नहीं चल रही मालूम होता है।"

सोहिनीने संक्षेपमें उत्तर दिया, "जरूर।"

इतनेमें जरा-सी कोई आवाज सुनकर रेवती मन-ही-मन चौंका, और दरवाजेकी तरफ देखने लगा। सुक्खन नौकर ग्लासकेसकी चाभियोंका गुच्छा लेकर भीतर आ रहा था।

सोहिनीने पूछा, "एक प्याला चाय मंगाऊं क्या?"

रेवतीने सोचा कि कहना चाहिए, 'हाँ।' बोला, "क्या हर्ज है।"

बेचारेको चाय पीनेकी आदत नहीं थी। जुकाम होनेपर बिल्वपत्रकी उकाली पिया करता है। मनमें उसके विश्वास था कि स्वयं नीला आयेगी चायका प्याला लेकर।

सोहिनीने पूछा, "कड़ी चाय पीते हो क्या तुम?"

चटसे कह बैठा, "हाँ।"

उसने सोचा कि ऐसे मौकेपर 'हाँ' कहना ही ठीक है। चाय आ गई, और वह कड़ी थी इसमें सन्देह नहीं। स्याही-सा रंग और नीम-सी कडुई। चाय लाया मुसलमान खानसामा। यह व्यवस्था भी उसकी परीक्षाके लिए थी। आपत्ति करनेको उसके मुँहसे कोई आवाज नहीं निकली। उसका यह संकोच अच्छा नहीं लगा सोहिनीको। उसने खानसामासे कहा, "चाय बनाके देते क्यों नहीं, मुबारक! ठंडी हुई जा रही है जो।"

खानसामाके हाथकी चाय पीनेके लिए वह बीस मिनट पहले नहीं आया यहाँ।

किनने दुःखसे ओठोंसे चाय लग रही थी, अन्तर्यामी ही जान रहे थे,

और जान रही थी सोहिनी। हजार हो, आखिर है तो औरत ही, दुर्गति देखकर सोहिनीसे रहा नहीं गया। बोली, "इस प्यालेको रहने दो, दूसरे प्यालेमें दूध दिये देती हूं, साथमें कुछ मिठाई और फल ले लो। सबेरे-सबेरे आये हो, शायद कुछ खा-पीकर नहीं आये होगे।"

बात सच है। रेवतीने सोचा था कि आज भी झुटनिकल-वर्गीदेकी पुनरावृत्ति होगी। किन्तु उस दिनके किनारेसे भी नहीं निकली सोहिनी। बेचारेके मुँहमें रह गया कड़ी चायका कड़ुआ स्वाद, और मनमें जम बैठी आशा-भंगकी तीखी अनुभूति।

इतनेमें प्रवेश किया अध्यापकने। कमरेमें घुसते ही वे रेवतीकी पीठ ठोंकते-हुए बोले, "क्या रे, हो क्या गया तुझे, बिलकुल ठंडा बरफ-सा हो रहा है! बबुआ-सा बैठा-बैठा दूध पी रहा है टुकुर-टुकुर। चारों तरफ जो-कुछ देख रहा है, यह क्या खिलौनोंकी दुकान है? जिनके आँखें हैं उन्होंने देखा है कि महाकालके चेले लोग आया करते हैं यहां ताण्डवनृत्य करने।"

"ओ-हो, क्यों सुना रहे हैं उल्टी-सीधी! बगैर खाये ही निकल पड़े थे घरसे सबेरे-सबेरे। यहां आये तो चेहरा सूखा-हुआ-सा मालूम हुआ।"

"लो, यहां भी बुआ-दि-सेकेण्ड मिल गई! एक बुआ जमायेंगी एक गालपर चपत, तो दूसरी बुआ दूसरे गालपर जमा देंगी प्यारकी मिट्ठी। बीचमें पड़कर लड़का बेचारा हो जायगा भीगी बिल्ली। असल बात क्या है जानती हो? लक्ष्मी जब स्वयं आती हैं अपनी गरजसे तब वे दिखाई नहीं देतीं, और जो लोग सात-सात मुल्क घूमकर उन्हें खोज निकालते हैं, पकड़ाई देती हैं वे उन्हींके हाथ। बिन-मांगे पानेके समान न-पानेका और कोई रास्ता ही नहीं। अच्छा बताओ तो, मिसेस, जाने दो मिसेस-विसेस, मैं तुम्हें सोहिनी ही कहा करूंगा, इसपर तुम चाहे नाराज होओ चाहे और-कुछ।'

"भला मैं नाराज क्यों होने लगी! कहिये न, 'सोहिनी'। 'तुम' कहें तो और भी अच्छा लगेगा।"

"तुम बातको प्रकट-रूपसे कहता हूं। तुम्हारे इस सोहिनी नामके साथ और-एक शब्दका मेल है, बहुत ही यथार्थ अर्थ है उसका। सबेरे सबेरे

उठते ही मैं तो हिनी-हिनी किसी-किनीकी धुनमें उन दोनों शब्दोंको मिलाकर मन-ही-मन खजरी बजाना शुरू कर देता हूं।"

"केमिस्ट्रीकी रिसर्चमें मेल करनेका आपको अभ्यास है, यह उसीका एक पुछल्ला है।"

"मेल मिलानेमें मरते भी हैं बहुतसे लोग। ज्यादा छेड़छाड़ करना भी ठीक नहीं,—घोरतर दाह्य पदार्थ है 'मेल'।"

इतना कहकर अध्यापक ठहाका मारकर हँस उठे।

फिर बोले, "नहीं नहीं, इस बच्चेके सामने इन सब बातोंकी आलोचना करना उचित नहीं। बारूदके कारखानेमें आज तक इसने ऐप्रेण्टिसी भी नहीं शुरू की। बुआका आँचल इसे रोके-हुए है, और वह है 'नॉन्‌कॉम्बस्टिब्ल।"

रेवतीका स्त्रैण-चेहरा लाल-सुर्ख हो उठा।

"सोहिनी, मैं तुमसे पूछना चाहता था, आज सवेरे-सवेरे क्या तुमने इसे अफीम खिला दी है? ऐसा ऊंघ क्यों रहा है यह?"

"खिलाई भी हो तो वह अनजानमें।"

"रेवू, चल उठ, उठ यहांसे! स्त्रियोंके सामने इस तरहसे मुँहचोर होकर नहीं रहना चाहिए। इससे इनलोगोंके दिमाग चढ़ जाते हैं। बीमारीकी तरह ये तो सिर्फ पुरुषोंकी कमजोरियां ढूढ़ती फिरती हैं, छिद्र पाते ही टेम्परेचर बढ़ा देती हैं दनसे। यह सब्जेक्ट मुझे मालूम है, इसलिए लड़कोंको सावधान कर देना पड़ता है। मेरी तरह जिनपर चोट पड़ चुकी है और मरे नहीं हैं, उन्हींसे पाठ लेना चाहिए। रेवू, कुछ ख्याल न करना, वत्स! जो लोग बात नहीं करते, चुप बने रहते हैं, वे ही सबसे बढ़कर भयंकर होते हैं। चल तो, तुझे लैबोरेटरी घुमा लाऊं। वो देख, दो गैल्वैनोमिटर, एकदम लेटेस्ट। वो देख, हाई-वैक्युअम पम्प, यह देख, माइक्रोफोटोमिटर। यह परीक्षा-पास करानेवाली कदली-काण्डकी नाव नहीं है। एक बार यहां आसन जमाकर बैठ तो देखूं। तुम्हारा वह गजी-खोपड़ीका प्रोफेसर—नाम नहीं लेना चाहता उसका—देखूं उसका मुंह इत्ता-सा निकल आता है या नहीं। जब तू मेरा छात्र था तब मैंने तुझसे नहीं कहा था कि तेरी नाकके सामने लटक रहा है

भविष्य! लापरवाही करके उसे नष्ट मत कर देना। तेरी जीवनीके प्रथम अध्यायके एक कोनेमें मेरा नाम भी अगर छोटे अक्षरोंमें लिखा रहे, तो वही होगी मेरी गुरुदक्षिणा।"

देखते-देखते विज्ञानी जाग उठा। चमक उठीं उसकी दोनों आँखें। चेहरा एकदम भीतरसे बदल गया। मुग्ध हो गई सोहिनी, बोली, "तुम्हें जो भी कोई जानते हैं वे सभी तुम्हारे विषयमें इतनी जबरदस्त उन्नतिकी आशा करते हैं जो रोजमर्राकी नहीं किन्तु चिरकालकी है। पर, आशा जितनी बड़ी होती है उतनी ही बड़ी उसकी बाधा भी होती है भीतर और बाहर।'

अध्यापक चौधरीने रेवतीकी पीठपर फिर एक जबरदस्त थपका जमा दिया। झनझना उठी उसकी रीढ़। चौधरीने अपने भारी गलेसे कहा, "देख, रेवू, जिस महान भविष्यका वाहन होना चाहिए था ऐरावतको, कजन वर्तमान उसे जोत देता है बैलगाड़ीमें, कीचड़में फँसकर वह पड़ी रह जाती है अचल होकर। सुनती हो, सोहनी, सुनो?—नहीं नहीं, पीठ नहीं ठोकूँगा। सच-सच बताना. बात मैंने कैसे अच्छे ढंगसे बनाकर कही है?"

"बहुत सुन्दर!"

'इसे लिख रखो अपनी डायरीमें।'

"जरूर।'

"बातका अर्थ तो समझ गया न, रेवी!"

"शायद समझ गया।"

"याद रखना, विशाल प्रतिभाका दायित्व भी विशाल होता है। वह तो किसीकी निजी चीज नहीं है। उसकी जिम्मेदारी अनन्तकालके प्रति है। सुन रही हो, सुनो, सुन रही हो? क्या बात कही है मैंने?"

"बहुत ही अच्छी कही है। पुराने जमानेके राजा होते न, तो गलेसे मोतियोंकी माला उतारकर—"

"वे तो मर चुके सब, किन्तु—"

'किन्तु अभी नहीं मरा। याद रहेगी।'

रेवतीने कहा, "डरनेकी कोई बात नहीं, कोई भी बात मुझे दुर्बल नहीं कर सकती।"

कहकर वह सोहिनीके पैर छूनेके लिए आगे बढ़ा। सोहिनीने जल्दीसे रोक दिया।

चौधरीने कहा, "अरे, किया क्या तुमने! पुण्यकर्म न करनेमें दोष है, और पुण्यकर्ममें बाधा देनेमें और भी अधिक दोष है।"

सोहिनीने कहा, "प्रणाम यदि करना ही हो तो वहां करो।"—कहते-हुए उसने वेदीपर रखी-हुई नन्दकिशोरकी मूर्ति दिखा दी। धूप जल रही थी वहां, और एक थालीमें रखे थे बहुतसे फूल।

बोली, "पतितोद्धारकी कथा पुराणोंमें पढ़ी है। मेरा उद्धार किया है इन्हीं महापुरुषने। बहुत नीचे उतरना पड़ा था, अन्तमें उठाके बिठा सके थे ये—पासमें कहनेसे मिथ्या कहना होगा—अपने चरणोंके नीचे। विद्याके मार्गमें मनुष्यके उद्धार करनेकी दीक्षा इन्हींने दी थी मुझे। कह गये हैं, लड़की जमाईका घमण्ड बढ़ानेके लिए उनके जीवनका खान-खोदकर-निकाला-हुआ रत्न मैं घूरेके ढेरमें न फेंक दूं। कह गये हैं, 'यहीं रखे जाता हूं मैं अपनी सद्गति, और अपने देशकी सद्गति'।"

अध्यापकने कहा, "सुन लिया न, रेवू? यह होगी ट्रस्ट-सम्पत्ति, और तुमपर सौंपा जायगा इसका कर्तृत्व।"

रेवतीने जरा-कुछ चंचलताके साथ कहा, "कर्तृत्व लेनेके योग्य मैं नहीं हूं। यह मुझसे नहीं होगा।"

सोहिनीने कहा, "नहीं होगा! छिः, यह क्या पुरुषों-जैसी बात हुई?"

रेवतीने कहा, "मैं हमेशासे विद्याभ्यास करता आया हूं, ऐसे कार्यका भार कभी नहीं लिया मैंने।"

चौधरीने कहा, "अण्डा फोड़नेके पहले बतक कभी भी तैरी नहीं, बादमें तैरती देखी गई है। तुम्हारा भी आज अण्डेका आवरण टूटेगा।"

सोहिनीने कहा, "डरो मत, मैं रहूंगी तुम्हारे साथ-साथ।"

रेवती आश्वस्त होकर चला गया।

मोहिनी अध्यापकके चेहरेकी तरफ देखती रही।

चौधरीने कहा, "दुनियामें बेवकूफ बहुत तरहके होते हैं, उनमें पुरुष बेवकूफ ही सर्वश्रेष्ठ है। किन्तु याद रखना, दायित्व हाथमें लिये बगैर दायित्वकी योग्यता भी नहीं आती। मनुष्यको दो हाथ मिले हैं इसीलिए वह हुआ है मनुष्य। अगर उसे दो खुर और मिल जाते, तो साथ-साथ उसके मलने-लायक एक पूछ भी निकल आती। तुम्हें क्या रेवतीके हाथोंके बदले खुर दिखाई दे रहे हैं क्या?"

"नहीं, मुझे अच्छा नहीं लग रहा है। औरतोंके हाथमें ही जो पले पनपे हैं उनके दूधके दांत कभी नहीं टूटते। भाग्य मेरा! आपके रहते हुए मैंने और-किसीकी बात सोची ही क्यों?"

"तबीयत खुश हो गई सुनकर। जरा समझा तो दो क्या गुण पाया मेरे अन्दर?"

"लोभ नहीं है आपके मनमें जरा भी।"

"इतनी बड़ी निन्दा! लोभ-जैसी चीजका लोभ नहीं मुझे? — काफी है, बहुत है—"

मुँहकी बात छीनकर अध्यापकके दोनों गालोंपर दो चुम्बन जड़ दिये सोहिनीने, और तुरत हट आई अपनी जगहपर।

"किस खातेमें जमा हुआ यह, सोहिनी?"

"आपसे जो ऋण मिला है उसे तो मैं चुका नहीं सकती कभी, सिर्फ ब्याज देती जाती हूं।"

"पहले दिन एक बार, और आज दो बार! बराबर इसी तरह वृद्धि होती रहेगी क्या?"

"सो तो होगी ही, ब्याज दर-ब्याज, चक्रवृद्धिके नियमसे।"

८

चौधरीने कहा, "क्यों सोहिनी, आखिर अपने पतिके श्राद्धमें तुमने मुझे पुरोहित बना ही डाला? बड़ी मुसीबत है, बड़ी-भारी जिम्मेदारी ठहरी, इसे

पार पड़ेगी? जिसका अस्तित्व टटोले भी कहीं मिलता, उसे प्रसन्न करना! यह तो बँधे-दस्तूरकी दान-दक्षिणा नहीं, जो—"

"आप भी तो बँधे-दस्तूरके गुरु-पुरोहित नहीं हैं, आप जो भी कुछ करेंगे वही होगी विधि-पद्धति। दानकी व्यवस्था तैयार कर रखी है तो?"

"कई दिनोंसे मैं तो यही काम कर रहा हूं। दुकान-बाजार भी कम नहीं घूमा। दान-सामग्री सजाई जा चुकी है नीचेके बड़े कमरेमें। इहलोककी आत्माएँ जो उन्हे हड़पेंगी वे भर-पेट खुश होंगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

चौधरीके साथ-साथ नीचे जाकर सोहिनीने देखा कि सायन्स-पढ़नेवाले विद्यार्थियोंके लिए तरह-तरहके यंत्र, तरह-तरहके मॉडेल, नानाप्रकारकी पुस्तकें, माइक्रोस्कोपकी बहुत-सी स्लाइडें और बायोलॉजीके बहुत-से नमूने लाकर रखे गये हैं। और, प्रत्येक चीजके साथ नाम और ठिकाना लिखे कार्ड लगे-हुए हैं। ढाई सौ विद्यार्थियोंके लिए चेक लिखे तैयार हैं साल-भरकी वृत्तिके। खर्चके विषयमें जरा भी कहीं कोई संकोच नहीं किया गया है। बड़े-बड़े धनी-मानियोंके श्राद्धमें जो ब्राह्मण-विदाई दी जाती है उससे इस दक्षिणाका खर्च बहुत ज्यादा है। किन्तु विशेष-रूपसे कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता इसका समारोह।

"पुरोहित-विदाईमें क्या दक्षिणा देनी होगी, सो तो आपने लगाई ही नहीं कहीं?"

"मेरी दक्षिणा है तुम्हारी प्रसन्नता।"

"प्रसन्नताके साथ-साथ आपके लिए रख रखा है यह क्रोनोमिटर। जर्मनीसे खरीदकर मंगवाया था इसे उन्होंने,—बराबर यह उनके रिसर्चके काममें आता था।"

चौधरीने कहा, "जो भावना मनमें उठ रही है, उसके लिए भाषा नहीं है। फालतू बात मैं कहना नहीं चाहता,—मेरी पुरोहिताई आज सार्थक हुई।"

"और-एक आदमी है, आज उसे मैं भूल नहीं सकती,—हमारे यहँका मानिक,—उसकी विधवा बहू है।"

"मानिक कौन?"

"वह था लैबोरेटरीका हेड-मिस्त्री। आश्चर्यजनक हाथ था उसका। बारीकसे बारीक काममें भी बाल-बराबर फर्क नहीं होता था. मशीन-पुरजोंका तत्त्व समझनेमें उसकी बुद्धि थी अभ्रान्त। उसे वे अति निकट-मित्रके समान देखते थे। गाड़ीमें बिठाकर ले जाते थे बड़े-बड़े कारखाने दिखानेके लिए। एक तरफ वह था शराबी, उसके नीचे काम करनेवाले 'छोटा-आदमी' समझकर उसकी अवज्ञा करते थे। वे कहा करते थे, 'वह गुणी आदमी है, उसके वे गुण बनाये नहीं जा सकते, और न ढूंढे ही मिलेंगे कहीं।' उनकी दृष्टिमें उसका सम्मान काफी मात्रामें था। इसीसे आप समझ जायेंगे कि क्यों उन्होंने मुझे अन्त तक इतना सम्मान दिया। मेरे अन्दर जो मूल्य उन्होंने देखा था उसकी तुलनामें दोषका वजन उनकी दृष्टिमें था अत्यन्त सामान्य। जिस जगह मुझ जैसी 'पाजी-चीज़' पर वे असम्भव-रूपसे विश्वास करते थे उस जगह उनके उस विश्वासको मैंने जरा भी नष्ट नहीं किया। आज तक उसकी रक्षा कर रही हूं मन-प्राणसे। इतना वे और-किसीसे भी नहीं पाते थे। जहां मैं छोटी थी वहां उनकी नजरोंमें नहीं पड़ी मैं, किन्तु जहां मैं बड़ी हूं वहां उन्होंने मुझे पूरा सम्मान दिया है। मेरा मूल्य अगर उनकी नजरोंमें न आता तो मैं किस रसातलमें चली जाती, आप ही बताइये। मैं बहुत बुरी हूं, किन्तु मैं खुद ही कहती हूं कि मैं बहुत अच्छी हूं, —नहीं तो मुझे वे किसी भी हालतमें सहन नहीं कर सकते थे।"

"देखो, मोहिनी, मैं अहंकारके साथ ही कहूंगा, मैंने शुरूसे ही जान लिया था कि तुम बहुत अच्छी हो। सच्चे कामकी अच्छाई होनी तो जरूर, लग जानेपर फिर उसका दाग नहीं छूटता।"

"कुछ भी हो, मुझे और-कोई आदमी चाहे जो भी समझता हो, पर उन्होंने जो मान दिया है वह आज तक टिका हुआ है, और मेरे जीवनके अन्तिम दिन तक टिका रहेगा।"

"देखो, मोहिनी, मैं तुम्हें जितना ही देख रहा हूं उतना ही समझ रहा हूं कि तुम उस जातिकी लड़की नहीं हो जो 'पति' शब्द सुनते ही विगलित हो जाती है।"

"नहीं, सो मैं नहीं हूं। मैंने देखी है उनके भीतरकी शक्ति, पहले ही दिनसे जान गई हूं मैं कि वे आदमी हैं, मैं शास्त्र मिलाकर पतिव्रतापन नहीं करने बैठी। मैं दावेके साथ ही कहती हूं कि मेरे अन्दर जो रत्न है, वह एकमात्र उन्हींके कण्ठ-हारमें लटकने-योग्य था, और-किसीके नहीं।"

इतनेमें नीला आ गई कमरेमें। बोली, "अध्यापकजी, कुछ खयाल न कीजियेगा, मासे कुछ बात करना है।"

अध्यापकने कहा, "खयाल करनेकी कोई बात नहीं, बेटी, अब मैं जा रहा हूं लैबोरेटरीमें। रेवती कैसा काम कर रहा है, देख आऊं जाकर।"

नीलाने कहा, "कोई डरकी बात नहीं। काम अच्छा ही चल रहा है। मैंने किसी-किसी दिन खिड़कीके बाहरसे देखा है, वे सिर झुकाये लिखते ही रहते हैं,—नोट लिखा करते होंगे। कभी-कभी दांतोंमें कलम दबाकर सोचा भी करते हैं। मेरा तो वहां प्रवेश निषिद्ध है,—इसलिए कि कहीं मेरे जरिये सर आइजकका ग्रैविटेशन हिल-डुल न जाय। उस दिन मा किसीसे कह रही थीं कि वे 'मैग्नेटिज्म'-सम्बन्धी खोज कर रहे हैं, वहां किसीका गमनागमन होता है तो कांटा हिल जाता है, खासकर लड़कियोंके जानेसे।"

चौधरी ठहाका मारकर हँस पड़े। बोले, "बेटी, लैबोरेटरी तो अपने भीतर ही है, मैग्नेटिज्म-सम्बन्धी काम तो वहां चला ही करता है, कांटेको जो हिला देती हैं उनसे डरना ही पड़ता है। दिग्भ्रम हो जाता है न!—अच्छा तो अब चल दिया।"

नीलाने अपनी मासे कहा, "मुझे अब और कितने दिन अपने आंचलमें बांधके रखोगी, मा? रख तो सकोगी नहीं, सिर्फ दुःख ही पाओगी।"

"तू क्या करना चाहती है बता?"

नीलाने कहा, "तुम्हें तो मालूम है, लड़कियोंके लिए एक हाइयर स्टडी मूवमेण्ट चालू हुआ है, तुम उसमें काफी रुपया भी दे चुकी हो। वहां मुझे काममें क्यों नहीं लगा देतीं?"

"मुझे डर है, कहीं तू ठीकसे न चली तो?"

"सब तरहका चलना बन्द कर देना ही क्या ठीक चलनेका रास्ता है?"

"सो तो नहीं है, मुझे भी मालूम है, सोच तो इसी बातका है मुझे।"

"तुम खुद न सोचकर अब मुझे सोचने दो। आखिर तो सोचना पड़ेगा ही मुझे। मैं अब दूध-पीती बच्ची नहीं हूं। तुम सोचती हो कि इन-सब पब्लिक जगहोंमें तरह-तरहके आदमी आते-जाते हैं, इसलिए इसमें विपत्तिकी सम्भावना है। संसारसे आदमियोंका जाना-आना तो बन्द होगा नहीं तुम्हारे लिए। और न तुम्हारे हाथमें ऐसा-कोई कानून ही है कि तुम उनके साथ मेरे परिचयको बिल्कुल रोक रखो।"

"जानती हूं, सब जानती हूं मैं। डरती भी हूं कि डरके सब कारणोंको रोक नहीं सकती। — तो, तू उनलोगोंके हाथपर स्टडी सर्कलमें भरती होना चाहती है?'

"हां, चाहती हूं।"

"अच्छा, ठीक है। यहांके पुरुष अध्यापकोंको एक-एक करके जहन्नुमका रास्ता दिखाके छोड़ेगी तू, मुझे मालूम है। तुझे सिर्फ एक वचन देना होगा मुझे। किसी भी हालतमें रेवतीके पास तू हरगिज नहीं फटक सकती। और न कभी किसी बहानेसे लैबोरेटरीमें ही जा सकती है।'

"मा, तुमने मुझे क्या समझ रखा है, मेरी कुछ समझमें ही नहीं आता। मैं फटकने जाऊंगी तुम्हारे उस टुटपुंजिये सर आइजक न्यूटनके पास! ऐसी रुचि है मेरी? — सर जानेपर भी नहीं।"

सकोच अनुभव करनेपर रेवती अपने शरीरको टेढ़ा कर जिस ढंगसे बगलें झांकने लगता है उसकी नकल करते-हुए बोलने लगी, "उस स्टाइलके पुरुषको लेकर मेरा काम नहीं चल सकता। जो लड़कियां बूढ़े-बच्चोंका लालन-पालन करना पसन्द करती हैं, तुम्हारे स्टाफको जिलाये रखना चाहिए उन्हींके लिए। यह मारनेके लायक शिकार ही नहीं।"

"जरा-कुछ बना-बनाकर बात कर रही है, लीला, इसीसे डर लगता है कि यह ठीक तेरे मनकी बात नहीं है। और कोई बात नहीं, इसके सम्बन्धमें तेरे मनका भाव चाहे कुछ भी हो, अगर उसे तू छिपाना चाहेगी तो वह तेरे लिए अच्छा नहीं होगा।'

"कब तुम्हारी क्या मरजी होती है, कुछ समझमें नहीं आता, मा! उसके साथ मेरा ब्याह करनेके लिए तुम मुझे गुड़िया सजाके ले गईं थीं, सो क्या मैं समझी नहीं थी? इसीलिए क्या तुम मुझे उसके पास ज्यादा जाने-आनेकी मनाही कर रही हो कि कहीं अधिक परिचयकी रगड़ लगके पालिश न खराब हो जाय?"

"देख, नीला, मैं तुझसे कहे देती हूं, तेरे साथ उसका ब्याह हरगिज नही हो सकता।"

"तो फिर, मैं अगर मोतीगढ़के राजकुमारसे ब्याह करना चाहूं?"

"मरजी हो तो कर लेना।"

"उसमें एक सुभीता यह है कि उसके तीन ब्याह हो चुके हैं,—मेरी जिम्मेदारी बहुत-कुछ हलकी रहेगी। और फिर वह शराब पीकर 'नाइट क्लबों' में लड़खड़ाता रहता है,—उस समय भी मुझे फुरसत मिला करेगी।"

"अच्छा ठीक है, जैसी तेरी मरजी। किन्तु रेवतीके साथ तेरा ब्याह मैं हरगिज नहीं होने दूंगी।"

"क्यों, तुम्हारे उस सर आइजक न्युटनकी बुद्धिमें मैं क्या भांग घोल दूंगी?"

"बस, बहसकी जरूरत नहीं,—जो कह दिया है उसे याद रख!"

"वे खुद ही अगर कंगलापन करें?"

"तो उसे यह मुहल्ला छोड़ना पड़ेगा,—अपने अन्नसे तू उसे पालना पोसना, तेरे बापके रुपयोंमेंसे उसे एक कौड़ी भी नहीं मिलेगी।"

"गजब रे गजब! तब तो दूरसे ही नमस्कार है सर आइजकको।"

उस दिनकी बातचीत यहीं खतम हो गई।

६

"चौधरी साहब, और तो सब ठीक चल रहा है। लेकिन लड़कीकी दुश्चिन्ता मुझे खाये जा रही है। वह किधर किस ताकमें फिर रही है, क्या कर रही है, मेरी कुछ समझमें नहीं आता।"

चौधरीने कहा, "और फिर उसके पीछे कौन किस ताकमें फिर रहा है, यह भी तो चिन्ताका विषय है। हुआ क्या, इधर कुछ दिनोंसे चारों तरफ एक ही अफवाह फैली हुई है कि लैबोरेटरीकी रक्षाके लिए तुम्हारे पति बेहद रुपया छोड़ गये हैं। लोगोंकी जबानोंपर उसकी संख्या बढ़ती ही चली जा रही है। अब तो यह हालत है कि राज्य और राजकन्याके विषयमें बाजारमें फाटकेबाजी शुरू हो गई है।"

"राजकन्या मिट्टीके मोल बिकेगी, इसका तो मुझे पक्का भरोसा है, किन्तु मेरे जीते-जी राज्य सस्तेमें नहीं बिक सकता।"

"किन्तु लोगोंका आयात तो शुरू हो गया है! उस दिन अचानक देखता क्या हूं कि हमारे ही यहांके अध्यापक मजूमदार सिनेमासे निकल रहे हैं नीलाके साथ हाथमें हाथ दिये! मुझे देखते ही गरदन फेर ली दूसरी तरफ। लड़का अच्छे-अच्छे विषयोंपर लेक्चर देता फिरता है, देश-हितके विषयमें तो उसकी वाणी खिलने लगती है अनायास ही! किन्तु उस दिन उसकी टेढ़ी गरदन देखकर स्वदेशके लिए मुझे चिन्ता होने लगी है।'

"चौधरी साहब, हुक्का तो टूट चुका।"

"टूट तो चुका ही। अब इस गरीबको भी अपना थाली-लोटा सम्हालना पड़ेगा।"

"मजूमदारोंके मुहल्लेमें महामारी चलती है तो चलने दो,—मुझे डर है रेवतीका।"

"फिलहाल कोई डर नहीं। गहराईमें डूबा-हुआ है। अच्छा काम कर रहा है।"

"सब ठीक है, चौधरी साहब, किन्तु एक जगह जो वह घोर अनाड़ी है। मातृकुलमें भले ही वह उस्ताद हो, किन्तु, जिसे तुम 'मेट्रियार्की' कहते हो, उस राज्यमें उसके लिए जबरदस्त खतरा है।"

"तुम्हारा कहना ठीक है। उसे एक बार भी 'टीका' नहीं दिया गया। इस हमलेपर बचाना कठिन हो जायगा।'

"रोज एक बार आपको देख जाना होगा उसे।"

"पर, और-कहींसे वह छून न ले आवे। आखिर इस उमरमें मुझे न बेमौत मरना पड़े! डर मत जाना, हो तो आखिर स्त्री ही, फिर भी आशा करता हूं कि मजाक शायद समझ सकती हो। मैं तो पार हो आया हूं एपिडेमिकका मुहल्ला। अब छू जानेपर भी छूत नहीं लगती। लेकिन सामने एक मुश्किल आ खड़ी हुई है। परसों मुझे जाना पड़ेगा गुजरानवाला।"

"यह भी मजाक है क्या? स्त्री-जातिपर दया कीजियेगा।"

"मजाक नहीं। मेरे सहपाठी अमूल्यचरण अढ्डी थे वहांके डाक्टर। बीस-पचीस सालसे वहां प्रैक्टिस कर रहे थे। कुछ सम्पत्ति भी इकट्ठी की थी। अचानक स्त्री-पुत्रोंको छोड़कर मर गये वे हार्टफेल होकर। देन-लेन सब चुकाकर जमीन-जायदाद बेचकर उनलोगोंको उद्धार करके ले आना पड़ेगा यहां। कितने दिन लगेंगे, ठीक नहीं कह सकता।"

"इसपर तो कुछ कहा नहीं जा सकता।"

"इस संसारमें कहा तो किसीपर भी कुछ नहीं जा सकता, सोहिनी! निर्भय होकर कहो, 'जो होगा ही, वह हो।' जो लोग भाग्य मानते हैं वे गलती नहीं करते। हम सायन्टिस्ट भी तो कहते हैं, अनिवार्यमें एक बाल बराबर भी फर्क नहीं आ सकता। जब तक कुछ करनेका हो, करो; जब किसी भी तरह कुछ न कर सको, बोलो, बस।"

"अच्छा ठीक है।"

"जिस मजुमदारकी बात मैंने कही है, वह उतना खतरनाक नहीं उस दलमें। दलवाले उसे अपने गुटमें मिलाये रखते हैं इज्जत बचानेकी गरजसे। और-और जिन लोगोंकी बात सुनी है, चाणक्यके मतानुसार उनसे सौ हाथ दूर रहनेपर भी चिन्ताका कारण बना ही रह जाता है। अटर्नी है एक बांकेबिहारी, उसका आश्रय लेना और 'ऑक्टोपस'के साथ आलिंगन-पाशमें आबद्ध होना एक ही बात है। धनी विधवाका गरमागरम खून उनलोगोंको बहुत पसन्द है। एक खबर सुन रक्खो पहलेसे, अगर कुछ करनेका हो तो करना। और अन्तमें मेरी फिलॉसॉफी भी याद रखना!"

"देखिये, चौधरी साहब, रखिये आप अपनी फ़िलॉसॉफी। मैं नहीं

मानूंगी आपके अदृष्टवादको, नहीं मानूंगी मैं आपके कार्य-कारणके अमोघ विधानको अगर मेरी 'लैबोरेटरी'पर किसीका हाथ पड़ा। मैं पंजाबकी औरत हूं, मेरे हाथमें छुरी खेलती है बड़ी आसानीसे। मैं खून कर सकती हूं, फिर चाहे वह अपनी लड़की हो या जमाई-पदका उम्मीदवार!"

उनकी साड़ीके नीचे था कमरबन्द छिपा-हुआ। उसमेंसे चटसे एक छुरी निकालकर उसकी चमक दिखा दी। बोली, "उन्होंने मुझे चुनकर ग्रहण किया था अपने लिए,—मैं बंगाली लड़की नहीं हूं, प्रेमके पीछे सिर्फ आंसू बहाकर जिन्दगी बरबाद नहीं करनी। प्रेमके लिए मैं प्राण तक दे सकती हूं, और प्राण ले भी सकती हूं! एक तरफ मेरी 'लैबोरेटरी' है और एक तरफ मेरा कलेजा, इन दोनोंके बीचमें है यह छुरी!"

चौधरीने कहा, "किसी जमानेमें मैं कविता लिख लेता था, आज फिर ऐसा लगता है कि शायद लिख सकता हूं।"

"कविता आपको लिखना हो तो लिखा कीजियेगा। किन्तु, आप अपनी फिलासाफी वापस ले लीजिये। जो नहीं माननेका है उसे मैं अन्त तक नहीं मानूंगी। अकेली खड़ी-खड़ी लड़ूंगी। और छाती फुला-फुलाकर कहूंगी, मैं जीतूंगी ही जीतूंगी, जीतूंगी ही जीतूंगी, जीतूंगी ही जीतूंगी!"

"अहो, मैंने वापस ले ली अपनी फिलासाफी। और अबसे ढोल पीटता चलूंगा तुम्हारी जययात्राके साथ-साथ। फिलहाल कुछ दिनोंके लिए विदा लेता हूं, लौटनेमें विलम्ब नहीं होगा।"

आश्चर्यकी बात है कि सोहिनीकी आंखोंमें आंसू भर आये।

उसने कहा, "कुछ खयाल न कीजियेगा।"

और चटसे लिपट गई चौधरीके गलेसे।

और फिर बोली, "संसारमें कोई बन्धन ही नहीं टिकता, यह भी एक क्षणके लिए है।"

इतना कहकर सोहिनीने गला छोड़ दिया, और पांवों पड़कर अध्यापकको प्रणाम किया।

१०

अखबारोंमें जिसे 'परिस्थिति' कहा जाता है, वह सहसा आ खड़ी होती है ; और जब आती है तो दलबलके साथ। जीवनकी कहानी सुख-दुःखमें विलम्बित होकर चलती है। शेष अध्यायमें 'कोलिशन' होता है अकस्मात्, और तब वह चकनाचूर होकर स्तब्ध हो जाती है। विधाता अपनी कहानी गढ़ते हैं सुनारकी तरह धीरे-धीरे, और तोड़ते हैं लुहारकी एक चोटसे।

सोहिनीकी नानी रहती हैं अम्बालामें। सोहिनीको उनका तार मिला है, 'अगर मुंह देखना चाहती हो तो जल्दी आओ।'

यह नानी ही उसकी एकमात्र निकट-सम्बन्धी है जो जिन्दा है। इसीके हाथसे नन्दकिशोर सोहिनीको खरीद लाये थे।

नीलासे उसकी माने कहा, "तुम भी मेरे साथ चलो।"

नीलाने कहा, "मैं तो हरगिज नहीं जा सकती।"

"क्यों, क्या बात है ?"

"उनलोगोंने मेरे अभिनन्दनकी तैयारियां कर ली हैं।"

"उनलोगोंने मानी ? कौन हैं वे लोग ?"

"जागरण-क्लबके मेम्बर। डरो मत, बहुत शरीफ क्लब है। मेम्बरोंके नामकी सूची देखते ही समझ जाओगी। बिलकुल चुने-हुए मिलेंगे।"

"क्लबका उद्देश्य क्या है ?"

"कहना कठिन है। उद्देश्य नाममें ही मौजूद है। इस नामके नीचे आध्यात्मिक साहित्यिक आर्टिष्टिक सभी मानी काफी गहराई तक छिपे-हुए हैं। नवकुमार बाबूने बहुत ही उमदा व्याख्या की थी। उनलोगोंने तय किया है, तुमसे वे चन्दा लेने आयेंगे।"

"मगर चन्दा तो, मैं देखती हूं, ले-लकर खतम कर दिया सब। तुम सोलहो-आने पड़ चुकीं उनके हाथ। लेकिन बस, यहीं तक। मेरे लिए जो त्याज्य था, उसीको उनलोगोंने लिया है। मुझसे अब और-कुछ पानेकी आशा कतई न रखें वे।"

"मां, इतनी नाराज क्यों हो रही हो? वे निःस्वार्थ-भावसे देशकी सेवा करना चाहते हैं।"

"अच्छा, अब छोड़ो इस बहसको। अब तक तुम्हें अपनी मित्र-मण्डलीसे पता चल गया होगा कि तुम स्वाधीन हो?"

"हां, चल गया है।"

"उन निःस्वार्थियोंने तुम्हें यह भी जता दिया होगा कि तुम्हारे पिताकी छोड़ी-हुई सम्पत्तिमें तुम्हारे लिए जो रुपया है उसे तुम अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकती हो?"

"हां, जता दिया है।"

"और, मेरे कानमें भनक पड़ी है कि उनके वर्नायननामेको 'प्रोबेट' लेनेके लिए तुम सब मिलकर कोशिश कर रहे हो। क्या यह सच है?"

"हां, सच है। बांके बाबू मेरे सालिसिटर हैं।"

"उन्होंने तुम्हें और-भी कुछ आशा और परामर्श दिया है?"

नीला चुप रह गई।

"तुम्हारे बांके बाबूको मैं सीधा कर दूंगी अगर मेरी सरहदमें उन्होंने कदम रक्खा! कानूनसे हुआ तो कानूनसे, नहीं तो गैर-कानूनसे। वापस आते वक्त मैं पेशावर होकर आऊंगी। 'लैबोरेटरी'में दिन-रात पहरा देनेके लिए मैं चार सिख-सिपाहियोंको तैनात किये जाती हूं। और, जाते समय यह भी तुम्हें दिखाती जाती हूं,—मैं पंजाबकी लड़की हूं।"

इतना कहकर उसने कमरबन्दमेंसे छुरी निकालकर दिखाई; और कहा, "यह छुरी न तो स्त्रीको जानती है, और न लड़केके मालिकको, समझीं! इसकी स्मृति छोड़े जाती हूं तुम्हारे जिम्मे। वापस आकर अगर हिसाब लेनेका वक्त आया तो हिसाब लूंगी, छोड़ूंगी नहीं।"

११

लैबोरेटरीके चारों तरफ़ काफ़ी ऊंची फ़सील है। किसी तरहका कम्पन या कोई शब्द लैबोरेटरीके अन्दरसे बाहर न पहुंच सके — इसीके

लिए व्यवस्था है यह। यह निस्तब्धता कामके अभिनिवेश या तन्मयतामें रेवतीको सहायता पहुंचाती है। इसीसे वह अकसर यहाँ रातको काम करने आता है।

नीचेकी घड़ीमें दो बज गये। रेवती खिड़कीके बाहर आकाशकी तरफ दृष्टि किये क्षण-भरके लिए अपने विषयकी विचार-धारामें तल्लीन था।

इतनेमें, दीवारपर छाया आ पड़ी किसीकी। मुंह फेरकर देखा तो नीला है! रातकी पोशाकमें, महीन सिल्ककी ढीली कमीज और साया पहने हुए। रेवती चौंककर कुरसीसे उठ खड़ा हो रहा था, इतनेमें, नीला उसके गलेमें बांह डालती-हुई उसकी गोदमें आ बैठी। रेवतीका सारा शरीर थरथर कांपने लगा, और कलेजा ऊपरको आने लगा। गद्‌गद कंठसे कहने लगा, "तुम जाओ, जाओ इस कमरेसे, चली जाओ।"

नीलाने कहा, "क्यों?"

रेवतीने कहा, "मुझसे सहा नहीं जा रहा है। क्यों आईं तुम यहाँ?"

नीलाने उसे और भी जोरसे दबाते-हुए कहा, "क्यों, मुझे क्या तुम प्यार नहीं करते?"

रेवतीने कहा, "करता हूं, करता हूं, करता हूं। पर यहाँसे तुम जाओ!"

सहसा भीतर चला आया पंजाबी पहरेवाला। तिरस्कारके स्वरमें उसने कहा, "बाईजी, बहुत शरमकी बात है, आप निकल जाइये यहाँसे।"

रेवतीने चेतन-मनके अगोचरमें बिजलीकी घंटीका बटन कब दबा दिया, उसे पता ही नहीं।

पंजाबी सिपाहीने रेवतीसे कहा, "बाबू सा'ब, बेईमानी मत करो।"

रेवती नीलाको जबरदस्ती ढकेलकर कुरसीसे उठ खड़ा हुआ।

दरबानने फिर नीलासे कहा, "आप बाहर जाइये, नहीं तो हमको अपनी मालिकिनका हुकम तामील करना पड़ेगा।"

अर्थात्, जबरदस्ती बेइज्जतीके साथ निकाल बाहर करेगा।

बाहर जाते-जाते नीलाने कहा, "सुनते हैं, सर आइजक न्युटन? — कल हमारे घरपर आपका चायका निमंत्रण रहा, करेक्ट टाइम चार बजके पैंतालीस

मिनटपर। सुन रहे हैं? बेहोश हो गये क्या?'—कहती-हुई फिर एक बार उसकी तरफ मुड़कर खड़ी हो गई।

वाष्पसे भीगे कठसे उत्तर आया, "सुन लिया।"

रात-पोशाकके भीतरसे नीलाके सुडौल सुन्दर बदनका गठन संगमरमरकी मूर्तिके समान नयनाभिराम-रूपसे प्रस्फुटित हो उठा। और रेवतीकी मुग्ध आँखें उसे देखे बगैर न रह सकीं। नीला चली गई। रेवती टेबिलपर मुंह रखकर पड़ा रहा। ऐसे आश्चर्यजनक सौन्दर्यकी वह कल्पना नहीं कर सकता। एक प्रकारका विद्युत-तरंग प्रवेश कर गया उसकी नस-नसमें, और वह चक्कित-हुआ चक्कर काटने लगा अग्नि-धारामें। हाथकी मुट्ठियाँ बाँधकर रेवती बार-बार कहलाने लगा अपनेसे, 'कल चायके निमन्त्रणमें नहीं जाऊंगा।' यही कड़ी शपथ करना चाहता है, किन्तु मुंहसे कुछ निकलता नहीं। अन्तमें ब्लाटिंग-पैडपर लिखने लगा, 'नहीं जाऊंगा, नहीं जाऊंगा, नहीं जाऊंगा।' सहसा देखा कि उसकी टेबिलपर एक गहरे लाल रंगका रेशमी रुमाल पड़ा है, उसके एक कोनेपर सूतसे कढ़ा है 'नीला'। रुमाल उसने अपने मुंहपर दबा लिया, सुगन्धसे मगज भर गया, एक नशा-सा सरसराता-हुआ फैल गया उसके सारे शरीरमें।

नीला फिर कमरेमें आ गई। बोली, "एक काम है,—भूल गई थी।"

दरबानने रोकनेकी कोशिश की। नीलाने कहा, "डरो मत तुम, मैं चोरी करने नहीं आई।" और रेवतीसे बोली, "सिर्फ एक साइन चाहिए। जागरण-क्लबका प्रेसिडेण्ट बनाना है तुम्हें,—तुम्हारा नाम है डेन-भरमें।"

रेवतीने अत्यन्त संकुचित होकर कहा, "उस क्लबके विषयमें मैं तो कुछ जानता नहीं।"

"कुछ भी जाननेकी जरूरत नहीं। इतना जाननेसे ही काम चल जायगा कि महेन्द्र-बाबू उस क्लबके पेट्रोन हैं।"

"मैं तो महेन्द्र-बाबूको जानता नहीं।"

"इतना जानना ही काफी है कि मेट्रोपोलिटन बैंकके वे डिरेक्टर हैं। मेरे प्यारे हो न, मेरे कलमी सोनचन्द हो,—एक साइन दो तो कहती हूं।

इतना कहकर नीलाने अपना दाहना हाथ रेवतीके कंधेपरसे घुमाकर उसका हाथ पकड़कर कहा, "करो साइन।"

रेवतीने स्वप्नाविष्टकी भांति कर दी साइन।

कागज लेकर नीला जब उसे तह करने लगी, तो दरवानने कहा, "यह कागज हमको दिखाना होगा।"

नीलाने कहा, "इसे तो तुम समझोगे नहीं।"

दरवानने कहा, "जरूरत नही समझनेकी।" और कागज छीनकर टुकड़े-टुकड़े कर डाले उसके। बोला, "दस्तावेज बनाना हो तो बाहर जाकर बनाओ। यहाँ नहीं।"

रेवती मन-ही-मन सांस लेकर जी गया। दरवानने नीलासे कहा, "बाईजी, अब चलो, आपको घर पहुंचा देते हैं।" और नीलाको वहाँसे ले गया।

कुछ देर बाद फिर भीतर आया पंजाबी पहरेदार। बोला, "चारों तरफसे सब दरवाजे बन्द रखते हैं हम, फिर वो भीतर कैसे आ जाती है! आप खोल देते हैं मालूम होता है।"

यह कैसा सन्देह! इतना अपमान! रेवतीने बार-बार कहा, "मैंने नहीं खोला।"

"तो फिर वो आई कैसे भीतर?"

बात तो ठीक है। वैज्ञानिकजी तथ्यकी खोज करने लगे चारों तरफ घूम-घूमकर। अन्तमें देखा कि सड़ककी तरफकी एक खिड़की, जो भीतरसे बन्द रहती है, दिनमें किसी समय उसका हुड़का खुला छोड़ दिया था किसीने।

रेवतीमें ऐसी धूर्त-बुद्धि हो सकती है, इतनी श्रद्धा उसके प्रति नहीं थी दरवानको। वह समझता है कि बेवकूफ आदमी है, पढ़ता-लिखता है, बस इतनी ही ताकत है उसमें। आखिर दरवानने कपारपर हाथ ठोंकते-हुए कहा, "औरतकी जात है, बाबू, बड़ी शैतान जात है!"

थोड़ी-बहुत रात जो बाकी थी, रेवती बार-बार अपनेसे कहलाता रहा, वह चायके निमंत्रणमें नहीं जायगा।

कौए बोल उठे। रेवती घर चला गया।

१२

दूसरे दिन देखा गया कि वक्तकी पाबन्दीमें रेवतीने जरा भी ढील नहीं की। चायकी सभामें वह ठीक चार बजके पैंतालीस मिनटपर पहुँच गया। उसने सोचा था कि सभा एकान्तमें होगी उन्हीं दोनोंको लेकर। फैशनेबल पोशाकपर उसका कोई दखल नहीं। धोती-कुरता पहनके आया है, और कंधेपर डाल रखी है तह-की-हुई एक चद्दर। यहाँ आकर उसने देखा कि सभा बैठी है बगीचेमें, अपरिचित शौकीन आदमियोंकी भीड़ है। भीतरसे उसका कलेजा बैठ गया,—कहीं छिप सके तो जी जाय। एक कोनेमें बैठनेकी कोशिश करते ही सबके सब उठके खड़े हो गये। बोले, "आइये आइये, डॉक्टर भट्टाचार्य, आपका आसन यहाँ है।"

एक ऊँची-पीठीकी मखमल-मढ़ी कुरसी थी मण्डलीके ठीक बीचो-बीच। नीलाने आकर उसके गलेमें माला पहना दी, और ललाटपर लगा दिया चन्दनका तिलक।

प्रजेन्द्र बाबूने प्रस्ताव किया कि डाक्टर भट्टाचार्यको सभापतिके पदपर अभिषिक्त किया जाय। समर्थन किया बांके-बाबूने। चारों तरफसे तालियाँ गड़गड़ा उठीं। साहित्यिक हरिदास बाबूने डाक्टर भट्टाचार्यकी अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिपर एक गठित किन्तु सारगर्भ भाषण दिया। कहा, "रेवती बाबूके नामके पालमें हवा लगाकर हमारी जागरण-समितिकी तरणी पश्चिमी महासमुद्र पार करके जागरणका सन्देश पहुँचायेगी दिक्‌के कोने-कोनेमें।"

सभाके व्यवस्थापकोंने रिपोर्टरोंके कानोंमें जाकर कहा, 'रिपोर्टमें उपमाएँ सब जरूर लिखियेगा, कोई छूट न जाय।'

यथाक्रम उठ-उठके सब कहने लगे कि 'इतने दिन बाद डाक्टर भट्टाचार्यने भारत-माताके ललाटपर विद्याका जय-तिलक अंकित कर दिया'. रेवती भी तब खड़ा हो उठा,—अपनेको प्रमाणित किया उसने मन्द-कण्ठसे धन्यवादसे। जागरण-समितिके विषयमें उसने जो-कुछ बातें सुनी थीं, मन-ही-मन प्रतिवाद करने लगा उनका वह। हरिदास बाबूने जब कहा कि 'रेवती बाबू

नामका कवच रक्षा-कवचके रूपमें पहनाया जाता है आज इस समितिके गलेमें, इसीसे समझ सकते हैं कि इस समितिका उद्देश्य कितना महान है', तब रेवती अपने नामका गौरव और दायित्व अत्यन्त प्रबल-रूपसे अनुभव करने लगा। उसके मनसे सकोचकी केंचुली उतर गई। तरुणियां अपने मुहकी सिगरेट हाथकी उगलियोंमें धारण करके झुक पड़ीं रेवतीकी कुरसीपर, और मधुर हास्यके साथ बोलीं, "परेशान कर रही हैं हम आपको, पर एक ऑटोग्राफ तो आपको देना ही पड़ेगा।"

रेवतीको ऐसा लगा कि मानो इतने दिन वह किसी स्वप्नमें था,—अब स्वप्नका कोप फट गया है और तितली बाहर निकल आई है।

एक-एक करके सब लोग चले गये।

नीलाने रेवतीका हाथ मसकते हुए कहा, "आप नहीं जाइयेगा।"

ज्वालामय मदिरा उँडेल दी उसकी नसोंमें।

दिनका उजाला खतम हो चला है, लता-वितानमें हरा प्रदोष-अन्धकार छा गया है।

बेंचपर दोनों जने पास-पास बैठ गये। अपने हाथपर रेवतीका हाथ रखते-हुए नीलाने कहा, "डॉक्टर भट्टाचार्य, आप पुरुष होकर स्त्रियोंसे इतने डरते क्यों हैं?"

रेवतीने स्पर्धाके साथ कहा, "डरता हूं? हरगिज नहीं।"

"मेरी मासे आप नही डरते?"

"डरने क्यों लगा, श्रद्धा करता हूं।"

"मुझसे?"

"जरूर डरता हूं।"

"यह अच्छी खबर है। मा कहती हैं कि मेरे साथ आपका व्याह वे हरगिज न होने देंगी। ऐसा हुआ तो, मैं तो आत्महत्या कर लूंगी।"

"किसी भी बाधाको मैं नहीं मानूंगा। हमलोगोंका व्याह होकर रहेगा।"

रेवतीके कंधेपर माथा रखकर नीलाने कहा, "तुम शायद नहीं जानते कि मैं तुम्हें कितना चाहती हूं।"

नीलाके माथेको और-भी अपनी छातीके पास खींचते-हुए रेवतीने कहा, "ऐसी कोई शक्ति ही नहीं जो तुम्हें मेरे पाससे छीन ले।"

"जाति ?"

"बहा दूंगा जातिको।"

"तो रजिस्ट्रारके पास कल ही नोटिस देना होगा।"

"कल ही दूंगा, जरूर दूंगा।"

रेवतीने पुरुषका तेज दिखाना शुरू कर दिया है।

परिणाम बड़ी तेजीसे नजदीक आने लगा।

इधर मोहिनीकी नानीके लकवाके लक्षण दिखाई देने लगे हैं। मृत्युकी आशंका सम्भावनामें परिणत हो गई है। जब तक मृत्यु नहीं होती तब तक वे मोहिनीको हरगिज नहीं छोड़ेंगी। और इस सुनहले मौकेको दोनों हाथोंसे जकड़कर नीलाका उन्मत्त यौवन आलोडित हो उठा।

पाण्डित्यके दबावसे रेवतीके पौरुषका स्वाद फीका पड़ गया है,—नीला उसे ज्यादा पसन्द नहीं करती। किन्तु उससे विवाह करना निरापद है। विवाहोत्तर उच्छृङ्खलतामें बाधा देनेका जोर उसमें नहीं है। सिर्फ इतना ही नहीं। लैबोरेटरीके साथ जो लोभका विषय लिपटा-हुआ है उसका परिमाण भी बहुत ज्यादा है। उसके हितैषियोंका कहना है कि 'लैबोरेटरीका भार लेनेवाला योग्यतर व्यक्ति कहीं भी नहीं मिलेगा रेवतीसे बढ़कर; और मोहिनी किसी भी हालतमें उसे छोड़ नहीं सकती।' यही है बुद्धिमानोंका अनुमान।

इधर सहयोगियोंका धिक्कार शिरोधार्य करके रेवतीने जागरण-क्लबकी अध्यक्षताका संवाद घोषित होने दिया संवादपत्रोंमें।

नीला जब उससे कहती कि 'डर लग रहा होगा भीतर-ही-भीतर', तो वह जवाब देता, 'मैं नहीं परवाह करता किसीकी।' उनके पौरुषके स्पन्दनमें किसीको लेशमात्र संशय न रहे—यह जिद उनके सिर हो ली। कहता है, 'एलिंगटनके साथ मेरा पत्र-व्यवहार होता है, किसी दिन उन्हें निमन्त्रण देकर मैं इस क्लबमें बुलाऊंगा।' क्लबके सदस्य कहते, 'धन्य है।'

रेवतीका असल काम बन्द हो गया है। टूट गया है उसका सारा चिन्तन-सूत्र। मन बराबर प्रतीक्षा करता रहता है, 'नीला कब आयेगी', अचानक पीछेसे आकर आँख मसक लेगी। कुरसीके हत्थेपर बैठकर बायाँ हाथ उसके गलेमें डाल देगी। अपनेको वह यह कहकर आश्वास देता रहता है कि उसका काम जो रुक गया है वह क्षणिक है, जरा सुस्थिर होते ही फिर जुड़ जायगा छिन्न-सूत्र। किन्तु सुस्थिर होनेके लक्षण जल्दी दिखाई नहीं दे रहे हैं। उसके कामके नुकसानसे संसारका कोई नुकसान हो रहा है, नीलाके मनके किसी कोनेमें भी ऐसी आशंका नहीं। जो-कुछ हो रहा है उसे वह महज एक 'प्रहसन' समझती है।

दिनपर दिन जाल बराबर उलझता ही जा रहा है। जागरण-समितिने रेवतीको बुरी तरह जकड़ लिया है, उसे वह घोरतर पुरुष बनाये दे रही है। अभी तक अकथ्य कुछ मुँहसे नहीं निकलता, किन्तु आश्राव्य सुनकर जोरोंसे हँसता रहता है। असलमें 'डॉक्टर भट्टाचार्य' उनलोगोंके लिए एक 'बड़े मजेकी चीज' बन गया है।

कभी-कभी रेवतीको ईर्षा भी दाँत-काटने लगती है। बैङ्कके डायरेक्टरके मुँहकी चुरुटसे नीला अपनी चरुट सुलगाती है। इसकी नकल करना रेवतीके लिए असाध्य है। चुरुटका धुआँ गलेमें जानेसे उसका सिर चकराने लगता है, किन्तु यह दृश्य उसके शरीर-मनको और भी ज्यादा अस्वस्थ कर देता है। इसके सिवा जब नाना प्रकारका धकमधक्का और खींचातानी चलती रहती है तो उससे आपत्ति किये बगैर रहा नहीं जाता।

नीला कहती, "इस देहपर हमारे कोई मोह नहीं, हमारे लिए इसकी कीमत क्या है! असल कीमती चीज है प्रेम। उसे क्या बाँट-बखेर सकती हूं!" इतना कहकर वह मसक देती है रेवतीका हाथ।

रेवती तब औरोंको अपात्र समझकर भीतर-ही-भीतर फूला नहीं समाता। सोचता है, 'ये लोग खोपटेसे ही खुश हैं, गरी तो मिली ही नहीं नासमझोंको।'

लैबोरेटरीके फाटकपर दिन-रात पहरा चालू है, भीतर अधूरा काम पड़ा हुआ है, किसीके दर्शन ही नहीं।

१३

ड्राइंग-रूममें सोफेपर पैर चढ़ाये गद्दीदार कुर्सीपर बैठी है नीरु, और जमीनपर उसके पैरोंके पास सोफेसे पीठ सटाये बैठा है रेवती, उसके हाथमें हैं लिखे-हुए कुछ फुलस्केप कागज।

रेवतीने सिर हिलाते-हुए कहा, "इसको आपने बहुत ज्यादा रंग चढ़ा दिया है। इतना बढ़ा-चढ़ाकर कहनेमें शरम आयेगी मुझे।"

"आपाके तुम बड़े-भारी समझदार हो न! यह तो केमिस्ट्रीका फारमूला नहीं है,—ऊहापोह मत करो, कण्ठस्थ कर डालो। मालूम है किसने लिखा है यह? इसके लिखनेवाले हैं हमारे साहित्यिक प्रमदारञ्जन बाबू!"

"ये सब इतने बड़े-बड़े वाक्य और बड़े-बड़े शब्द, इनका कण्ठस्थ करना मेरे लिए बहुत ही कठिन है।"

"काहेका कठिन है! कुछ नहीं। तुम्हारे आगे पढ़ते-पढ़ते मुझे तो साराका सारा याद हो गया है—'मेरे जीवनके सर्वोत्तम शुभ-मुहूर्तमें जागरण-समितिने मुझे जो अमरावतीकी मन्दार-मालासे समलंकृत किया है',—बस! तुम डरो मत, मैं तो तुम्हारे पास ही बैठी रहूंगी, धीरे-धीरे तुम्हें बताती रहूंगी।"

"साहित्यिक भाषा मुझे अच्छी आती नहीं, किन्तु फिर भी मुझे ऐसा तो लगता है, मालूम होता है सारीकी सारी लिखावट मेरा मजाक उड़ा रही है। अंग्रेजीमें अगर पढ़ने दो, तो मेरे लिए बड़ा आसान होगा। Dear friends, Allow me to offer you my heartiest thanks for the honour you have conferred upon me on behalf of the Jagarana-Club—the great Awakener इत्यादि—बस ऐसे दो-चार सेन्टेन्स पढ़ देना ही काफी—"

'नहीं, नहीं, सो नहीं होगा,—तुम्हारे [illegible] बहुत अच्छी होगी। पर यह है न,—'हे धन-धान्यके [illegible], हे [illegible], हे [illegible]',—[illegible]

भला ये सब बातें आ सकती हैं ! तुम-जैसे विज्ञान-विशारदके मुंहसे जब यह सुनेंगे न, तो तरुण बंगाल सर्पकी तरह फन उठाकर झूमने लगेगा। अभी काफी समय है,– पढ़ो पढ़ो, मैं भी साथ-साथ पढ़ती हूं।"

इतनेमें, अपने भारी-भरकम लम्बे शरीरको सीढ़ियोंपरसे आवाजके साथ वहन करते-हुए बैङ्कके मैनेजर ब्रजेन्द्र हालदार बूट मचमचाते हुए साहबी पोशाकमें कमरेमें दाखिल हुए। बोले, "ओह्, अब तो असह्य है, जब भी आता हूं, तुम्हें नीलापर दखल जमाये बैठा पाता हूं। काम नहीं, धन्धा नहीं, नीलाको अलग कर रखा है हमलोगोंसे कांटोंके घेरेकी तरह।"

रेवती सकुचित होकर बोला, "आज मुझे एक विशेष काम है, इसीसे—"

"काम तो है ही, इसी भरोसेपर तो आया ही था।– आज तुमने न्योता दिया है, सदस्योंको, व्यस्त होगी, यह जानकर ही आज आफिस जानेके पहले आध-घंटेका समय निकालकर जल्दी-जल्दी चला आ रहा हूं। आते ही सुन रहा हूं, यहीं ये काममें बँध गये हैं। आश्चर्य है। काम न रहे तो यहीं इनकी छुट्टी है, और काम रहे तो यही इनका काम है। ऐसे पीछा न छोड़नेवालोंके साथ हम कामवाले कैसे होड़ कर सकते हैं ! नीली, is it fair ?"

नीलाने कहा, "डाक्टर भट्टाचार्यमें दोष यह है कि ये असल बातको जोरके साथ नहीं कह सकते। 'काम है' इसलिए ये आये हैं, यह फालतू बात है। 'आये विना रहा नहीं गया' इसलिए आये हैं। यह एक सुनने-लायक बात है और सच है। मेरे सारे समयपर इन्होंने दखल जमा रखा है अपनी जिदके जोरसे। यही तो इनका पौरुष है ! तुम-सबोंको इस ईस्ट-बंगालके आगे हार माननी पड़ेगी।"

"अच्छी बात है, तो फिर हमें भी पौरुषका सचालन करना पड़ेगा। अबसे जागरण-क्लबके मेम्बर लोग नारी-हरणकी चर्चा शुरू करेंगे। जाग उठेगा पौराणिक युग !"

नीलाने कहा, "बडा मजा आ रहा है सुननेमें। नारी-हरण पाणि-ग्रहणसे अच्छा है। किन्तु पद्धति कैसी होगी ?"

हालदारने कहा, "अभी दिखा सकता हूं।"

"अभी ?"

"हां, अभी !"

कहके तुरत उसने अपने दोनों हाथोंपर उठा लिया नीलाको सोफेपरसे। नीला चीखती-हँसती-हुई उसके गलेसे लिपट गई।

रेवतीका चेहरा काला पड़ गया। उनके लिए सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि अनुकरण करने या बाधा देने लायक उनमें दैहिक बल नहीं। उन्हें ज्यादा गुस्सा आने लगा नीलापर, इन-सब असभ्य गँवारोंको सिर क्यों चढ़ाती है वह !

हालदारने कहा, "गाड़ी तैयार है। तुम्हें ले चला डायमण्ड-हार्बर। आज शामके भोजमें वापस कर जाऊंगा। बन्दरमें काम था, सो जाने दो चूल्हेमें। एक सत्कार्य हो जायगा। डॉक्टर भट्टाचार्यके लिए एकान्तमें काम करनेकी सुविधा किये देता हूं। तुम जैसी इतनी बड़ी बाधाको निकाल ले जाना ही अच्छा है। इसके लिए डॉक्टर मुझे धन्यवाद देंगे।'

रेवतीने देखा कि नीलामें छटपटानेके कोई लक्षण ही नहीं, अपनेको छुड़ा लेनेकी उसने कोशिश तक नहीं की, बड़े आरामसे वह हालदारकी छातीसे लगी रही। उसके गलेमें बाहें डाले रही एक विशेष आसक्त-भावसे। जाती-हुई बोली, "कोई डर नहीं है, विज्ञानी साहब, यह नारी-हरणका रिहर्सल मात्र है — लंका पार नहीं जा रही हूं, लौट आऊंगी पार्टीके वक्तपर।'

रेवतीने फाड़ फेंके लिखे-हुए कागज सब। हालदारके बाहु-बल और असमुचित अधिकार-विस्तारकी तुलना करते-हुए अपना विद्याभिमान आज उनके लिए व्यर्थ हो गया।

आज नाच-भोज था एक नामी होटलमें। निमन्त्रणकर्ता हैं स्वयं रेवती भट्टाचार्य और उनकी सम्मानिता [illegible] नीरा। किन्तु वे सुविख्यात नहीं हैं नृत्य-गानके लिए। टोस्ट प्रोपोज करनेके लिए उठ [illegible]। गुणगान किया जाने लगा रेवतीका और उनके [illegible]।

नीलाका। महिलाएँ खूब जोरोंसे सिगरेट फूंक रही हैं यह प्रमाणित करनेके लिए कि वे सम्पूर्णतः नारी नहीं हैं। और प्रौढ़ा स्त्रियोंने यौवनका 'चेहरा' लगाकर तरह-तरहके इशारोंसे चेष्टाओंसे अट्टहास्यसे उच्च कण्ठसे परस्पर ठेह-मसकामसकीमें युवतियोंसे आगे बढ जानेके लिए मततावी घुड़दौड़-सी शुरू कर दी है।

इतनेमें, सहसा प्रवेश किया सोहिनीने। स्तब्ध हो गये सबके सब।

रेवतीकी तरफ़ देखकर सोहिनीने कहा, "पहचान नहीं पा रही हूं। डाक्टर भट्टाचार्य हो क्या? खर्चके लिए रुपये मंगाये थे,—भेज दिये थे पिछले शुक्रवारको। यहां तो स्पष्ट देख रही हूं, किसी बातकी कमी नहीं है। अब जरा उठना पड़ेगा। आज रातको ही लैबोरेटरीकी लिस्टके अनुसार सब चीजें मिला देखना है।"

"आप मुझपर अविश्वास करती हैं?"

"अब तक तो अविश्वास किया नहीं था। मगर अब, लज्जा-शरम अगर कुछ भी बाकी हो तो, विश्वासकी बात तुम मत कहो अपने मुँहसे।"

रेवती उठना ही चाहता था, किन्तु नीलाने उसे कपड़ा खींचकर बिठा लिया। बोली, "आज इन्होंने मित्रोंको न्योता दिया है, सब चले जायँ पहले, उसके बाद ये जायेंगे।"

इसमें एक निष्ठुर ठोकर थी। सर आइजक माका बड़ा प्यारा है, उसके समान इतना बड़ा विश्वासपात्र और कोई नहीं, इसीसे और-सबोंको छोड़कर 'लैबोरेटरी'का भार उसपर दिया गया है।

और भी जरा नोंचकर दाग कर देनेकी गरजसे उसने कहा, "जानती हो, मा? अतिथी हैं आज पैंसठ! इस कमरेमें सब अमाये नहीं हैं, एक दल बगलके कमरेमें है,—सुन रही हो न, हा-हा हो-हो? पर-हेड पचीस रुपयेके हिसाबसे बिल बनेगा, शराब न भी पीओ तो भी उसके दाम लगाये जायेंगे। खाली गिलासोंका जुरमाना कम नहीं लगेगा। और-कोई होता तो चेहरा फक पड़ जाता। इनकी दरिया-दिली देखकर बैंकके डिरेक्टर तक दंग रह

गये हैं। सिनेमाकी गानेवालीको कितना देना होगा मालूम है? उसका एक रातका चार्ज होगा चार सौ रुपया।"

रेवतीका मन भीतर-ही-भीतर कटी मछलीकी तरह फटफड़ाने लगा। चेहरा फक पड़ गया, और मुँहमें जबान नहीं रही।

सोहिनीने पूछा, "आजका समारोह है किसलिए?"

"सो भी नहीं मालूम क्या? एसोसियेटेड-प्रेसमें निकल तो चुका है, आप जागरण-क्लबके प्रेसिडेण्ट बने हैं। उसीके सम्मानमें यह भोज है। लाइफ-मेम्बरशिपके छै सौ रुपये सुविधानुसार पीछे दे देंगे।"

"सुविधा शायद अब जल्दी नहीं होगी।"

रेवतीके मनके भीतर स्टीम-रोलर चल रहा था।

सोहिनीने उससे पूछा, "तो अभी तुम्हें उठनेकी सहूलियत नहीं होगी?"

रेवतीने नीलाके मुँहकी ओर देखा। उसके कुटिल कटाक्षकी मारसे पुरुषका अभिमान जाग उठा। बोला, "कैसे जाऊं बताइये, निमंत्रित लोग सब—"

सोहिनीने कहा, "अच्छा, मैं तब तक यहीं बैठी हूं। तनरउल्ला, तुम दरवाजेके पास हाजिर रहो।"

नीलाने कहा, "सो नहीं हो सकता, मा! यहां हमारा एक गुप्त परामर्श होगा, यहां तुम्हारा रहना उचित नहीं।"

"देख, नीला, चतुराईका पाठ अभी तैंने शुरू ही किया है, अभी तू मुझसे आगे नहीं बढ़ सकती। तुमलोगोंका क्या गुप्त-परामर्श है सो क्या मुझे मालूम नहीं? मैं कहे देती हूं तुमसे, तुमलोगोंके उस परामर्शके लिए मेरा ही रहना यहां सबसे ज्यादा जरूरी है।"

नीलाने कहा, "तुमने क्या सुना है, किससे सुना?"

"खबर लेनेकी करामात रहती है दिनके साँपकी तरह रुपयोंकी थैलीमें। यहां तुम्हारे तीन-तीन जानकार मिलकर दस्तावेज उल्ट-पुल्टकर देखना चाहते हैं 'लैबोरेटरी'के कागजमें कोई छिद्र है या नहीं। क्यों, यही बात न, नीलमणि?"

नीलाने कहा, "सो मैं सच्ची बात ही कहूंगी। बापके हाथसे रुपयोंमें

उनकी लड़कीका कोई भी हिस्सा न हो, यह अस्वाभाविक है। इसीसे सब सन्देह करते हैं—"

सोहिनी कुरसीसे उठ खड़ी हुई। बोली, "असल सन्देहकी जड़ और-भी जरा पहलेकी है। कौन तेरा बाप है, और किसकी सम्पत्तिका हिस्सा चाहती है तू? ऐसे आदमीकी लड़की है तू, कहनेमें तुझे शरम नहीं आई?"

नीला ऐसे उछली जैसे पांव-तले सांप पड़ गया हो। बोली, "क्या कह रही हो, मा!"

"सच कह रही हूं। उनसे कुछ भी छिपा नहीं था, वे जानते थे सब। मुझसे उन्हें जो मिलना था सो सब मिला है उन्हें, और आज भी मिलेगा। और-कुछकी उन्होंने परवाह ही नहीं की कभी।"

बैरिस्टर घोषने कहा, "मगर आपके मुंहकी बातसे तो सब प्रमाणित नहीं हो जायगा?"

"इस बातको वे जानते थे। इसीलिए सब बात खुलासा करके वे वसीयतनामेकी रजिस्ट्री करा गये हैं।"

"अरे भई बांके, बहुत रात हो गई, अब क्यों,– चलो, उठो।"

पठान सिपाहीका रंगढंग देखकर पैंसठके पैंसठो सदस्य नौ-दो-ग्यारह हो गये।

इतनेमें सूटकेस हाथमें लिये-हुए प्रोफेसर चौधरी आ धमके। बोले, "तुम्हारा तार पाकर दौड़ा चला आ रहा हूं। क्या रे, रेबी, चेहरा पार्चमेण्ट जैसा सफेद क्यों पड़ गया? अरे कोई है, बबुआका दूधका कटोरा तो ले आ!"

नीलाकी ओर इशारा करके सोहिनीने कहा, "जो लायेंगी, वे ये बैठी हैं।"

"ग्वालिनका रोजगार शुरू कर दिया है क्या, बेटी?"

"नहीं, ग्वाला फांसनेका रोजगार शुरू किया है; वो बैठा है न, शिकार।"

"कौन, अपना रेबी क्या?"

"आखिर मेरी लड़कीने ही मेरी 'लैबोरेटरी' बचाई। मैं आदमी नहीं पहचानती, पर मेरी लड़कीने ठीक समझ लिया था कि लैबोरेटरीमें मैंने ग्वाला बिठा दिया है। गोबरके कुण्डमें सब डूबने-ही-वाला था, बाल-बाल बच गया।"

अध्यापकने कहा, "बेटी, जब कि तुम्हींने इस जीवका आविष्कार किया है तो इस गोटविहारीका भार भी तुम्हींको लेना होगा। इसके और सब-कुछ है, सिर्फ बुद्धि नहीं है। तुम पास रहोगी तो इसकी कमी इसे मालूम ही नहीं पड़ेगी। बेवकूफ पुरुषको नाकमें नकेल पहनाकर चलाते रहना बड़ा आसान काम है।"

नीलाने कहा, "क्यों जी, सर आइजक न्यूटन, रजिस्ट्री-आफिसमें नोटिस तो दे चुके,— अब वापस लेना चाहते हो क्या?"

छाती फुलाकर रेवतीने कहा, 'मर जानेपर भी नहीं।"

"तो ब्याह होगा ही अशुभ-लग्नमें?"

"हाँ, होगा ही, जरूर होगा।"

सोहिनीने कहा, "किन्तु लैबोरेटरीसे सौ हाथ दूर।"

अध्यापकने कहा, "बेटी नील, यह बेवकूफ जरूर है, पर असमर्थ हर्गिज नहीं। इसका नशा कट जाने दो, उसके बाद देखना, खुराकके लिए ज्यादा चिन्ता नहीं रहेगी।"

"सर आइजक, तो फिर तुम्हें कपड़े-लत्ते जरा भद्र-ढंगके बनवाने होंगे, नहीं-तो तुम्हारे सामने मुझे 'घूंघट-वाली' होना पड़ेगा!"

सहसा और-एक छाया आ पड़ी दीवारपर। बुआजी आ खड़ी हुईं। बोलीं, "रेवी, घर चल।"

रेवती चुपचाप उठकर बुआजीके पीछे-पीछे चल दिया, पीछे मुड़कर देखा भी नहीं एक बार।

मूल - आश्विन १९९७
हिन्दी - श्रावण २००८

अकारादिक्रमिक सूची

[भाग १ से १९ तक]

उपन्यास

नाटक और प्रहसन

कविता और काव्य
